www.emanjari.com

RNI Title Code: BIHBIL02442

मंजरी

स्त्री के मन की

अंक 25

वर्ष 2023

4 प्रधानमंत्री, 27 साल, 11 कोशिशें

अपूर्ण लेकिन महत्वपूर्ण

मद्य निषेध, उत्पाद एवं निबन्धन विभाग तथा सूचना एवं जन-संपर्क विभाग, बिहार द्वारा जनहित में जारी।

मद्य निषेध, उत्पाद एवं निबन्धन विभाग तथा सूचना एवं जन-संपर्क विभाग, बिहार द्वारा जनहित में जारी।

संकल्पना

इक्विटी फाउंडेशन लंबे अरसे से एक वेब पत्रिका शुरू करने के बारे में सोच रहा था। मकसद था महिला और समाज के मुद्दों को शिद्दत से उठाना। जब हमने चीजों को एक साथ कर उसे पत्रिका के रूप में सजाने के बारे में सोचना शुरू किया तो इस क्रम में कई लोगों से जुड़े। हमने महिलाओं को पत्रिका से जोड़ने की कोशिश की। हम दोस्तों से मिले और परिचितों से बात की। महिलाओं के सामाजिक समूहों और शिक्षाविदों के एक साथ जुड़ने के बाद जो स्वरूप सामने आया वह है 'मंजरी'।

मंजरी यानी कोंपल। शाखों में फूटने वाली नन्ही पत्तियां। नई शाखों का सृजन करने वाले इन कोंपल को कुम्हलाने से बचाना जरूरी है नहीं तो पूरे पेड़ का विस्तार कुंद हो जाएगा। ठीक उसी तरह स्त्री के मन की मंजरी को सहेजने की जरूरत है वरना पेड़रूपी समाज विकृति का शिकार हो जाएगा। हमारा प्रयास इसी मंजरी को पुष्पित पल्लिवत करने का है जो औरत की सोच और उसकी को. शिश को सही दिशा प्रदान कर सके।

मंजरी के सृजन के दौरान पहले तो 10–30 लोगों का एक ढीला–ढाला समूह बना। विचार आते गए। अलग–अलग विषयों और मुद्दों पर। समूह में कुछ अनमनी महिलाएं थीं तो कुछ सहानुभूति दिखाने वाले पुरुष भी। कुछ महज एक या दो बैठकों में शामिल हुए तो कुछ जब मन में आया, आ गए। बाकी बचे लोगों ने 'मंजरी' को मुकाम पर ले जाने का दायित्व अपने कंधों पर लिया। 'मंजरी' का लक्ष्य एक ऐसा मंच उपलब्ध कराना है जहां बुद्धिजीवियों को उनकी खुराक मिले तो शोधकर्ताओं की जिज्ञासा शांत हो। क्रियान्वयन के लिए बहस और तर्क के रास्ते हमेशा खुले रहें। इक्विटी की लगातार कोशिश रही है शोध और क्रियान्वयन के बीच की दूरी को पाटना। ऐसे में हमारा मानना है कि शोध तब तक अप्रासंगिक हैं जब तक कि इनका लोगों की जिंदगी और उनके क्रियाकलापों से जुड़ाव न हो। ठीक इसी तरह सिविल सोसायटी के तौर पर अगर हम जमीनी सच्चाई से वाकिफ न रहें, जिनमें सामाजिक प्रक्रियाएं और ऐतिहासिक मूल्यों का समावेश है और जो समाज में रहने वाले लोगों के मूल्यों और उनके चरित्र को आकार देते हैं, तो किसी भी कोशिश का कोई मतलब नहीं रहता है।

'मंजरी' एक उद्यम है, क्रियाशीलता को शोध आधारित रचना और आलोचना के नजरिये से देखने का जो महिला अधिकारों के साथ–साथ जीवन के हर पलू को इंगित करे। नियमित गैर सरकारी संगठनों और अकादमिक तंत्रों से इतर 'मंजरी' राजनीति और आदर्शवादिता को लांघ कर सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक सुधारों को सांस्कृतिक संवेदनशीलता के आधार पर मापती है। 'मंजरी' उन तमाम कार्यकर्ताओं, विद्वानों, शिक्षाविदों, पत्रकारों, प्रोफेशनल, गृहणियों और नीति निर्धारकों द्वारा पढ़ी जाएगी जो किसी समस्या के लिए समाधान आधारित नवीन दृष्टि और पृथक सोच रखते हैं। यह पत्रिका अपने पाठकों को जेंडर आधारित मुद्दों को जैविक और सामा. जिक आधार पर परखने की छूट देती है। व्यक्ति और समाज की विचारधारा में जेंडर को लेकर क्या बदलाव आये और उनका क्या असर हुआ, इसकी पूरी पड़ताल करने की आजादी लोगों को होगी। यह पत्रिका एक कोशिश है पड़ताल की प्रवृत्ति को जगाने की ताकि लोग तेजी से बदलते और विविधताओं से भरे समाज में पूरी क्षमता से काम करने को तैयार हो सकें जिसमें महिलाओं के प्रति भेदभाव भी एक अहम मुद्दा होगा। महिला समानता और अधिकारों पर 'मंजरी' के दखल से उन बेशुमार कार्यकर्ताओं, संगठनों और विद्वजनों को फायदा होगा जो दहेज, यौन प्रताड़ना, महिला अधिकारों, महिला आरक्षण, आर्थिक सुधार और अल्पसंख्यक समुदायों के निजी कानूनों में रुचि रखते हैं।

पत्रिका का मकसद

इक्विटी फांडेशन खुद को सुविधाविहीन महिलाओं को उनकी पूर्ण क्षमता से अवगत कराने और समाज में उनके क्रियाशील प्रभुत्व को स्थापित कराने की दिशा में वाहक के तौर पर देखता है। देश के विकास के हर क्षेत्र में महिलाओं की समान भागीदारी की राष्ट्रीय नीति तभी सफल हो पाएगी जब महिलाओं की भूमिका और उनके योगदान को कमतर आंकने वाले संस्थान और विचारों को हतोत्साति किया जाये या उनका पूरी तरह सफाया किया जाय। 'मंजरी' की परिकल्पना समाज और अर्थव्यवस्था में महिलाओं के जीवन और उनके स्तर को प्रभावित करने वाले विचारों के निर्माण, विकास और उनके प्रसार के लिए की गई है। बारहवीं पंचवर्षीय योजना के परिप्रेक्ष्य में समानता संबंधी मुद्दों को इस प्रकार समग्र रूप में देखने की जरूरत है जो असमानता की अंतरवर्गीय विशेषताओं को जाहिर कर सके। समानता पर आधारित 'मंजरी' के ज्यादातर आलेख भिन्न–भिन्न समूहों को निशाने पर रखते हैं जो कुछ हद तक बेहद जरूरी भी है। इसलिए यह पत्रिका कुछ समूहों के कुछ विशेषाधिकारों के पूर्ण निष्कासन और अंतरवर्गीय दृष्टिकोणों के स्थापन के बीच नियंत्रक की भूमिका में होगी जो नीति निर्धारण और योजनाओं के क्रियान्वयन के दौरान असमानता को उसके तमाम स्वरूपों के साथ सामने रखने में कारगर होगी। ऐसे में इसका मकसद लैंगिक भेदभाव के निर्मूलन की ओर वह विवेचनात्मक चर्चा छेड़ने का है जो वर्तमान परिदृश्य में शोधों का एजेंडा तय कर सके और एक बेहतर वैकल्पिक प्रस्ताव का सृजन कर सके। अब तक यह संगठन कार्यशाला, कांफ्रेंस और अन्य सार्वजनिक आयोजनों के जरिये अपनी प्रतिबद्धता दर्शाता रहा है लेकिन अब इस पत्रिका के माध्यम से यह क्षेत्रीय, राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय अतिथि लेखकों, जिनमें विद्वजन, अधिवक्ता, सरकार, पत्रकार, फिल्म निर्माता, कवि और सामाजिक कार्यकर्ता हैं, को जोड़ने की कोशिश कर रहा है।

संरक्षण

पद्मश्री डा. उषा किरण खान
प्रख्यात लेखिका एवं साहित्यकार

मणिकांत ठाकुर
प्रख्यात पत्रकार

प्रो. भारती एस. कुमार
प्रोफेसर (सेवा.) इतिहास, पटना विवि

डा. रेणु रंजन
प्रोफेसर (सेवा.), समाज शास्त्र
पटना विवि

परामर्श

डा. शरद कुमारी
सचिव, बिहार महिला समाज

अंजिता सिन्हा
पत्रकार

डा. मधुरिमा राज
स्वतंत्र लेखिका एवं शोधकर्ता

सुजाता गुप्ता
लेखिका, कवयित्री एवं अनुवादक

संपादकीय

नारी शक्ति वंदन अधिनियम (128वां संशोधन) विधेयक, 2023 संसद के विशेष सत्र के दौरान 19 सितंबर 2023 को लोकसभा में पेश किया गया। महिला आरक्षण का मुद्दा स्वतंत्रता संग्राम के समय से ही चला आ रहा है। यहां तक कि संविधान सभा की बहस के दौरान भी यह मुद्दा उठा था लेकिन इसे इस आधार पर खारिज कर दिया गया था कि लोकतंत्र सभी समूहों के लोगों को समान प्रतिनिधित्व प्रदान करेगा। हालाँकि, आजादी के बाद के दशकों में, राजनीति में महिलाओं के प्रतिनिधित्व में कोई सुधार नहीं हुआ और संख्या खराब बनी रही।

'मंजरी: स्त्री के मन की' ने आज से करीब 10 साल पहले ही संसद में महिलाओं को 33 प्रतिशत आरक्षण को लेकर अपना विशेषांक प्रकाशित किया था। हालांकि आज यह बिल पारित होने के बाद कानून की शक्ल ले चुका है, लेकिन स्थिति कमोबेश वैसी ही बनी हुई है। यह कानून फिलहाल अमल में नहीं लाया जा सकता है। 2024 में लोकसभा चुनाव होने हैं, उसके बाद जनगणना की तारीख तय की जाएगी क्योंकि फिर उसके बाद ही परिसीमन कराया जा सकेगा और तब कहीं जाकर महिलाओं के लिए आरक्षण को लागू कराया जा सकेगा। ऐसे में यह कानून क्या अपनी प्रासंगिकता को बनाए रख पाएगा और क्या इस कानून को इसकी पूरी क्षमता के साथ लागू किया जा सकेगा, यह देखना होगा।

निश्चित रूप से अधिक से अधिक महिलाओं को राजनीति में प्रवेश करने की जरूरत है, लेकिन नेतृत्व गुणों और राजनीतिक कौशल के आधार पर समान मुख्यधारा के खिलाड़ियों के रूप में सामने आना चाहिए। आरक्षित सीटों से महिला नेता और भी पीछे जा सकती हैं। एक बड़ा सवाल आरक्षण के भीतर ओबीसी महिलाओं के लिए अलग से आरक्षण को लेकर भी उठाया जा रहा है, मुस्लिम महिलाओं के लिए कोटा का प्रश्न भी है, जो अब तक अनुत्तरित है। 'मंजरी' का यह 25वां अंक इन्हीं सारे प्रश्नों के इर्द–गिर्द आशंकाओं और संभावनाओं की तलाश करता है और उनके उत्तर ढूंढने की कोशिश करता है।

Nsrivastava

नीना श्रीवास्तव

मुख्य संपादक

नीना श्रीवास्तव

संपादक

दीपिका झा

शोध

नीना श्रीवास्तव
दीपिका झा

आवरण चित्र

वरिष्ठ अतिथि कलाकार
अनु प्रिया

लोगो डिजाइन

दीया भारद्वाज

प्रबंधन/व्यवस्था

राहुल कुमार

प्रकाशन

इक्विटी फाउंडेशन

संपर्क

इक्विटी फाउंडेशन
123 ए, पाटलीपुत्र कॉलोनी
पटना, 13
फोन : 0612.2270171

ई–मेल
equityasia@gmail.com
वेबसाइट
www.emanjari.com

अनुक्रमणिका

संकल्पना .....

हमारी बात : संपादकीय .....

क्या हमारे राजनीतिक दल दक्षिण अफ्रीका से कुछ सीख लेंगे? 1

लंबा रास्ता तय किया है, अब झांसे में नहीं आएंगे 4

जिन्होंने जलाईं आंदोलन की मशालें..... 7

महिला आरक्षण विधेयक की महिलाएं..... 10

महिलाओं के साथ फिर छल 13

स्वयंसिद्धा हैं महिलाएं, खुलेंगे नए रास्ते 18

'यह कानून कहीं चुनावी जलेबी तो नहीं' 20

कविता 'औरत' 22

एक बेहतरीन समाज और नीति निर्माता हैं महिलाएं 24

महिला वोटर चाहिए मगर लीडर नहीं 27

कानून नहीं, उनका क्रियान्वयन होना चाहिए 31

अनु प्रिया (कलाकार/लेखिका)

सुपौल बिहार में जन्मीं अनु प्रिया जी के साठ से अधिक किताबों के आवरण एवं पत्र–पत्रिकाओं में रेखाचित्र प्रकाशित हो चुके हैं। साहित्य अकादमी, राजकमल प्रकाशन, वाणी प्रकाशन, अल्टरनोट प्रकाशन, अगोर प्रकाशन, प्रकाशन विभाग आदि से किताबों के आवरण पर निरंतर इनके द्वारा बनाये गए चित्र का प्रकाशन होता रहता है।

थीम पेपर

क्या हमारे राजनीतिक दल दक्षिण अफ्रीका से कुछ सीख लेंगे?

एन. आर. मोहंती

वरिष्ठ पत्रकार। लंबे समय तक हिन्दुस्तान टाइम्स, पटना के स्थानीय संपादक रह चुके हैं। वर्तमान में जागरण इंस्टीच्यूट, नई दिल्ली के निदेशक पद पर कार्यरत हैं।

संविधान (106वां संशोधन) कानून, जिसके तहत केन्द्र तथा राज्यों के विधायी निकायों में सीधे चुनी जाने वाली एक–तिहाई सीटों को आरक्षित किया जाना है, को 28 सितम्बर, 2023 को राष्ट्रपति की मंजूरी प्राप्त हो गई। संयोग से, इस विधेयक को 19 सितम्बर, 2023 को लोकसभा में संविधान (128वां संशोधन) विधेयक के तौर पर पेश किया गया था। इस विधेयक को लोकसभा में लगभग सर्वसम्मति से पारित किया गया, जहां 454 सांसदों ने इसके पक्ष में और केवल 2 ने इसके विरोध में मत दिया। विरोधियों में एआईएमआईएम के दो विधायक शामिल थे जिनकी मांग थी कि महिला आरक्षण बिल के अंतर्गत मुस्लिम महिलाओं का कोटा अलग से निर्धारित किया जाए। चूंकि राज्यसभा में एआईएमआईएम का एक भी सदस्य नहीं था, इसलिए उच्च सदन में यह विधेयक सर्वसम्मति से 21 सितम्बर, 2023 को पारित हो गया।

इस सर्वसम्मति के क्या मायने हैं? लगभग तीन दशकों से महिला आरक्षण विधेयक अपने इसी प्रारूप के साथ निर्माण के मार्ग पर था लेकिन इसे कभी भी लोकसभा में बहुमत प्राप्त नहीं हो सका। इस संदर्भ में 1988 में राजीव गांधी की सरकार द्वारा महिलाओं के लिए एक योजना अपनाई गई, जिसमें निर्वाचित निकायों में महिलाओं के लिए आरक्षण की परिकल्पना की गई, और इस दिशा में पहला कदम उनके बाद की नरसिम्हा राव की कांग्रेस सरकार द्वारा उठाया गया और 1992 में 73वें और 74वें संविधान संशोधन अधिनियम के द्वारा पंचायती राज संस्थाओं में एक–तिहाई सीटों को महिलाओं के लिए आरक्षित किया गया। इसके बाद का अगला तार्किक कदम विधायिका में महिलाओं को आरक्षण देना था। पहली बार, 12 सितम्बर, 1996 को एच.डी. देवेगौड़ा की संयुक्त मोर्चा की सरकार ने संविधान (81वां संशोधन) विधेयक को सदन के पटल पर रखा जिसमें लोकसभा और राज्य विधानसभाओं में महिलाओं के लिए एक–तिहाई सीटों को आरक्षित किया जाना था। लेकिन उस विधेयक को ओबीसी वर्चस्व वाले दलों तथा लालू यादव, मुलायम सिंह यादव एवं नीतीश कुमार के नेतृत्व वाले समूहों के तीव्र विरोध का सामना करना पड़ा। यहां तक कि भाजपा सांसद उमा भारती ने भी बिल का मुखर विरोध किया था। उन्होंने महिला आरक्षण बिल के अंतर्गत ओबीसी महिलाओं के लिए कोटा की मांग की, ठीक वैसे ही जैसे एआईएमआईएम ने अभी हालिया बिल में मुस्लिम महिलाओं के आरक्षण की मांग को लेकर इसका विरोध किया। मई, 1997 में, आई.के. गुजराल की सरकार को भी इस तीव्र विरोध का सामना करना पड़ा। जुलाई, 1988 में, ममता बनर्जी, जो उस समय भाजपा के साथ शामिल हो गई थीं, के उकसावे पर वाजपेयी सरकार ने महिलाओं के लिए 33 प्रतिशत आरक्षण प्रदान करने वाले विधेयक को फिर से पेश किया, लेकिन कोई फायदा नहीं हुआ, क्योंकि ओबीसी कोटा की मांग बनी रही। दिसम्बर 1999 में, वाजपेयी सरकार ने महिलाओं को आरक्षण देने का दूसरा प्रयास किया– संविधान (85वां संशोधन विधेयक) – लेकिन उनकी पार्टी के भीतर और बाहर कड़े विरोध के कारण यह फिर से विफल हो गया। मनमोहन सिंह सरकार ने मई, 2008 में सीधे निर्वाचित विधायिकाओं में एक–तिहाई सीटों को आरक्षित करने वाले संविधान (108वां संशोधन) विधेयक को राज्यसभा में प्रस्तुत किया और बिल पर विचार–विमर्श के लिए स्थायी समिति को भेजने के बाद, 2010 में इसे पारित कराने में भी सफल रही, लेकिन लोकसभा में इसे फिर से विरोध का तूफान झेलना पड़ा क्योंकि इसमें ओबीसी कोटा के लिए स्पष्ट प्रावधान नहीं था।

अब सवाल ये हैः अगर 1996 से लेकर अब तक की तमाम सरकारें महिला आरक्षण बिल के भीतर ओबीसी कोटा को निर्धारित किए बिना इस बिल पर सर्वसम्मति बना पाने में असफल रही हैं, तो फिर मोदी सरकार को इसमें सफलता कैसे मिल गई। राजद, सपा और जदयू जैसी ओबीसी वर्चस्व वाली राजनीतिक पार्टियां इस बार कैसे मान गईं, जो लगभग तीन दशकों से मानने को तैयार नहीं थीं? जबाव साफ हैः चूंकि भाजपा, एनडीए के भीतर और बाहर के अपने समर्थक दलों के साथ, लोकसभा और राज्यसभा में प्रचंड बहुमत के साथ मौजूद है, उसे इन ओबीसी

समूहों के द्वारा रोक पाना संभव नहीं था। उन्हें ये भी पता था कि अगर उन्होंने इस बिल का विरोध किया तो भाजपा की शक्तिशाली प्रचार मशीनरी उन्हें महिला विरोधी चित्रित करने में कामयाब हो जाएगी। इसलिए, उन्होंने इस बिल का समर्थन करने का फैसला किया जबकि ओबीसी आरक्षण की अपनी पुरानी मांग को यथावत रखा, ताकि वे महिलाओं के हित के लिए खड़े रहने के साथ–साथ भाजपा को भी ओबीसी आरक्षण के मुद्दे पर बैकफुट पर ला सकें।

एक और कारण था जिसकी वजह से मोदी सरकार को न तो भाजपा के भीतर से और न ही विपक्षी दलों की तरफ से किसी भी विरोध का सामना करना पड़ाः क्योंकि इसके क्रियान्वयन को अनिश्चितकालीन समय के लिए टाल दिया गया। 128वें संशोधन विधेयक ने कहा कि महिलाओं के लिए आरक्षित सीटों का निर्धारण केवल परिसीमन का कार्य पूरा होने के बाद ही किया जा सकेगा। अब तथ्य ये है कि परिसीमन की कवायद अगली जनगणना प्रक्रिया पूरी होने के बाद ही शुरू की जा सकेगी। 2021 की जनगणना, जो अब तक पूरी हो जानी चाहिए थी, अभी तक शुरू भी नहीं हुई है। इसका मतलब है कि महिलाओं के लिए आरक्षण को लागू करने का जो सबसे निकटतम संभावित समय है वह 2029 का लोकसभा का चुनाव है, और यदि जनगणना और परिसीमन का कार्य आगे बढ़ा तो वह समय सीमा भी फिर से आगे के लिए टल सकती है। यह विलंब भाजपा और विपक्षी पार्टियों– सभी पुरुष प्रधान दल हैं– के लिए राहत की तरह है क्योंकि उन्हें विधायिका में महिला आरक्षण के कार्यान्वयन के कारण होने वाली आंतरिक उथल–पुथल से निपटने के लिए पर्याप्त समय मिल गया है। ये सभी पार्टियाँ अब पुराने ढर्रे पर अपनी राजनीति कर सकती हैं और भविष्य में नए रास्ते अपनाने का वादा कर सकती हैं। यह इस मुद्दे पर लगभग तीन दशकों के गतिरोध के बाद हासिल की गई चमत्कारी सहमति को ठीक ढंग से समझाता है।

चलिए मान लेते हैं कि 2029 में महिला आरक्षण नीति वास्तव में लागू हो जाएगी, तो क्या इससे महिला सशक्तिकरण में एक नये युग की शुरुआत होगी? इसका उत्तर मिला–जुला है। ऐसे कई लोग हैं जो तर्क देते हैं कि महिलाओं के लिए विशिष्ट सीटें आरक्षित करना और प्रत्येक परिसीमन अभ्यास के बाद इसे रोटेट करना निर्वाचकों, विशिष्ट निर्वाचन क्षेत्रों के मतदाताओं के साथ अन्याय है। यदि महिलाओं के लिए आरक्षित लोकसभा या विधानसभा सीट पर अपनी योग्यता के आधार पर चुनाव लड़ने के योग्य कोई उपयुक्त महिला नेता नहीं हैं, तो पार्टी का टिकट निश्चित रूप से क्षेत्र में समर्थन प्राप्त पुरुष नेता की पत्नी/बेटी/बहन को मिलेगा। ऐसी स्थिति में, महिला उम्मीदवार या यहां तक कि निर्वाचित महिला सांसद/विधायक एक डमी की भूमिका निभाती है जिसके नाम पर और जिसकी ओर से परिवार के पुरुष सदस्य क्षेत्र में राजनीति को नियंत्रित करते हैं। इस संदर्भ में कई लोग पंचायत निकायों में इसी तरह के सिंड्रोम की ओर इशारा करेंगे जहां 1992 में महिला आरक्षण लागू किया गया था। तब 'प्रधान पति' या 'सरपंच पति' का उदय हुआ था जो पंचायत संस्थानों के निर्वाचित महिला सदस्यों के पतियों की अतिरिक्त–संवैधानिक भूमिका को दर्शाता है। ये सही है कि शुरुआती सालों में पंचायत निकायों में आरक्षित सीटों पर चुनकर आने वाली महिलाओं के पतियों ने अपनी–अपनी पत्नियों के नाम पर राज किया, लेकिन बाद की जमीनी रिपोर्टों ने दिखाया कि उनमें से कई औरतें समय बीतने के साथ–साथ अपने पतियों के साये से बाहर निकलकर आईं। हम इन दिनों नियमित रूप से ऐसी रिपोट देखते हैं जो हमें बताती हैं कि कैसे देश के कोने–कोने में महिलाएं एक मजबूत राजनीतिक ताकत बनकर उभरी हैं। यह

केवल इसलिए संभव हो सका क्योंकि 1992 में स्थानीय निकायों में महिलाओं के लिए आरक्षण को अधिनियमित किया गया था। जब विधानसभाओं और लोकसभा की सीटों पर महिलाओं के लिए आरक्षण कानून को अधिनियमित किया जाएगा, तब भी कुछ ऐसा ही होने की संभावना है। इस अर्थ में प्रारंभिक विकृतियां ये हो सकती हैं कि किसी पार्टी के पुरुष नेता के परिवार की महिलाओं को चुनाव लड़ने का मौका मिलेगा, लेकिन यह प्रक्रिया आने वाले समय में कई महिला नेताओं को अपनी योग्यता के आधार पर उभरने का मौका देगी।

निःसंदेह एक दूसरा मुद्दा भी हैः यदि महिलाओं के लिए निर्धारित सीटें हर दस साल में बदल दी जाती हैं, तो एक महिला नेता को एक निर्वाचन क्षेत्र का पोषण करने के लिए कोई प्रोत्साहन नहीं मिलेगा। यह एक स्वाभाविक चिंता है; लेकिन कई लोगों का कहना है कि पिछले 70 वर्षों में अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति के लिए आरक्षित निर्वाचन क्षेत्रों के संबंध में इसी तरह के परिसीमन अभ्यास किए गए हैं; और यह दुर्जेय एससी/एसटी नेताओं के उदय को नहीं रोक पाया है। लेकिन यहां एक महत्वपूर्ण अंतर हैः एससी/एसटी की केवल कुछ निर्वाचन क्षेत्रों में बड़ी उपस्थिति है, जबकि महिलाओं की बात करें तो देश के लगभग सभी निर्वाचन क्षेत्रों में लगभग 50 प्रतिशत मतदाता महिलाएं हैं। ऐसे में हमारे पास एक सुझाव यह आता है कि महिलाओं के लिए 33 प्रतिशत सीटें विशिष्ट तौर पर आरक्षित करने की बजाय, यदि कोई ऐसा कानून हो जो सभी मान्यताप्राप्त राजनीतिक दलों के लिए लोकसभा या विधानसभा चुनावों के दौरान अपने द्वारा लड़ी जाने वाली सीटों में से 33 प्रतिशत सीटों को महिलाओं के लिए आरक्षित करने को बाध्य करे, तो यह अधिक प्रभावशाली होता। ऐसा करना महिलाओं और मतदाताओं, दोनों के लिए ही अधिक निष्पक्ष और हितकारी होता।

ऐसी स्थिति में जहां महिला उम्मीदवारों को विशिष्ट निर्वाचन क्षेत्र सौंपे जाते हैं, वहां अन्य सामान्य निर्वाचन क्षेत्रों में महिलाओं को पूरी तरह से बाहर कर दिया जाएगा। (आपको सामान्य सीटों पर अनुसूचित जाति के उम्मीदवार चुनाव लड़ते हुए देखने को नहीं मिलते हैं।) यह उन महिलाओं के साथ अन्याय होगा जिनकी सामान्य निर्वाचन क्षेत्रों में राजनीतिक आकांक्षाएं और क्षमताएं हैं। वहां के मतदाता सक्षम महिला नेतृत्व से भी वंचित रह जायेंगे। यदि 33 प्रतिशत आरक्षण निर्वाचन क्षेत्र के स्तर के बजाय पार्टी स्तर पर लागू किया जाए तो यह स्थिति उत्पन्न नहीं होगी।

कई ऐसे लोग भी होंगे जो यह सुझाव देंगे कि चुनाव लड़ने के लिए पार्टी के स्तर पर महिलाओं को आरक्षण देने की व्यवस्था को अनिवार्य नहीं बनाया जाना चाहिए, बल्कि उसे राजनी. तिक दलों के विवेक पर छोड़ देना चाहिए। वास्तव में, जब निर्वाचित निकायों में महिलाओं के लिए आरक्षण का मामला चर्चा में आया था, तब यह हमारी संविधान सभा की महिला सदस्यों की जोरदार टिप्पणी थी। प्रसिद्ध स्वतंत्रता सेनानी, रेणुका रे, काफी सशक्त थीं, ''हम विशेष रूप से महिलाओं के लिए सीटों के आरक्षण का विरोध करते हैं... जब महिलाओं के लिए सीटें आरक्षित की जाती हैं, तो सामान्य सीटों के लिए उनके विचार का सवाल ही नहीं उठता, चाहे वे कितनी भी सक्षम क्यों न हों। हमारा मानना है कि यदि केवल क्षमता पर विचार किया जाए, तो भविष्य में महिलाओं को आगे आकर स्वतंत्र भारत में काम करने के अधिक अवसर मिलेंगे।''

खैर, यह संविधान सभा की एक शक्तिशाली महिला सदस्य की एक आदर्शवादी स्थिति थी, जिसका समर्थन कई अन्य प्रसिद्ध महिला सदस्यों ने भी किया। लेकिन सच तो यह है कि हमारे जैसे पुरुष–प्रधान समाज में, अगर कानून लागू नहीं होते तो महिलाओं को उनका हक नहीं मिल पाता। सिर्फ दो महीने पहले ही संसद द्वारा महिला आरक्षण विधेयक को पारित करने के बाद का परिणाम देख लेंः सभी प्रकार के राजनीतिक नेताओं द्वारा महिलाओं के सशक्तिकरण के लिए बहुत अधिक बातें की गईं: इन नेताओं को पता है कि महिलाओं के लिए सीटों का आरक्षण कम से कम पांच साल तक नहीं होगा, ऐसे में समर्थित विधेयक की भावना को ध्यान में रखते हुए, वे चाहते तो नवम्बर के महीने में पांच राज्यों में जिन विधानसभा सीटों पर वे चुनाव लड़ रहे हैं, उनमें से एक–तिहाई सीटों को महिलाओं को सौंप सकते थे। लेकिन हकीकत क्या है? दो राष्ट्रीय दलों, कांग्रेस और भाजपा, में विधानसभा चुनावों के मौजूदा दौर में महिला उम्मीदवारों की संख्या 12% से भी कम है। इन राज्यों में 679 सीटों पर चुनाव हुए; कांग्रेस ने 666 सीटों पर उम्मीदवारों की घोषणा की, जिनमें से सिर्फ 74 महिलाएं हैं। भाजपा थोड़ी बेहतर है; 643 उम्मीदवारों की सूची में 80 महिला उम्मीदवार शामिल हैं। यह उस 33 प्रतिशत आरक्षण से बहुत दूर है जिसका उन्होंने दो महीने पहले ही वादा किया था। सच तो यह है; ये पार्टियां महिलाओं को सम्मानजनक संख्या में सीटें तभी देंगी जब उन्हें कानून द्वारा मजबूर किया जाएगा।

इसकी तुलना दक्षिण अफ्रीका की स्थिति से करेंः दक्षिण अफ्रीका की सबसे बड़ी राजनीतिक पार्टी, अफ्रीकी नेशनल कांग्रेस, ने किसी कानून का इंतजार नहीं किया; इसने 1991 में नेशनल असेंबली में महिलाओं के प्रतिनिधित्व पर चर्चा शुरू की। 1994 तक, एएनसी के टिकट पर चुनी गईं 36 प्रतिशत प्रतिनिधि महिलाएं थीं। 2009 तक, एएनसी ने महिलाओं को 50 प्रतिशत टिकट आवंटित किए; अन्य दलों ने भी एएनसी का अनुसरण किया। आज दक्षिण अफ्रीकी नेशनल असेंबली में 49.2 प्रतिशत महिला प्रति. निधित्व हैंः और यह सब स्वेच्छा से, बिना किसी कानूनी आदेश के हुआ।

क्या भारत के राजनीतिक दल दक्षिण अफ्रीका के ज्वलंत उदाहरण से सीख लेंगे? हम ऐसे उदाहरणों से कब सीखेंगे?

संघर्ष

नारी शक्ति वन्दन अधिनियम : लंबा रास्ता तय किया है, अब झांसे में नहीं आएंगे

प्रो, सुशीला सहाय

अध्यक्ष, बिहार महिला समाज

नये संसद भवन में लगभग 25 वर्षों से लम्बित महिला आरक्षण बिल नये नाम के साथ 'नारी शक्ति वन्दन अधिनियम' के नाम से अन्ततः पारित हो गया और राष्ट्रपति के हस्ताक्षर के बाद पूर्णतः अधिनियम बन गया है। दुर्भाग्य की बात यह है कि इसे तत्काल लागू नहीं करके 7 वर्षों के बाद लागू करने की बात तय हुई और वह भी दो शर्तों के साथ। देश में जनगणना और सीटों का परिसीमन का कार्य पूर्ण होने के बाद ही इसे लागू किया जायेगा।

अभी कानून बना और लागू होगा 2029 में, इसका मकसद क्या है? दरअसल आज जैसे–जैसे महिलाओं के बीच राजनीतिक जागरूकता बढ़ी है और महिला मतदाताओं के मत प्रतिशत में अप्रत्याशित वृद्धि हुई है, साथ ही बूथों पर महिला मतदाताओं के प्रतिशत में आई बढ़ोत्तरी ने सरकार को मजबूर किया कि महिला आरक्षण बिल को अधिनियम का रूप दिया जाय, ताकि उन्हें लोकसभा चुनाव में अपनी ओर आकर्षित अभी ही किया जा सके। लेकिन वे भूल गये कि आज की नारी राजनीतिक रूप से सजग और अपने अधिकारों के प्रति सचेत है। पंचायत और जिला स्तर पर लड़कर आनेवाली महिलायें अब झाँसे में नहीं आ सकतीं क्योंकि वे जानती हैं कि यहां तक पहुंचने के लिये महिलाओं को लंबे संघर्ष का रास्ता तय करना पड़ा है।

आज महिला आरक्षण बिल अगर अधिनियम बन सका है तो इसके लिये सबसे बड़ा योगदान

संघर्ष

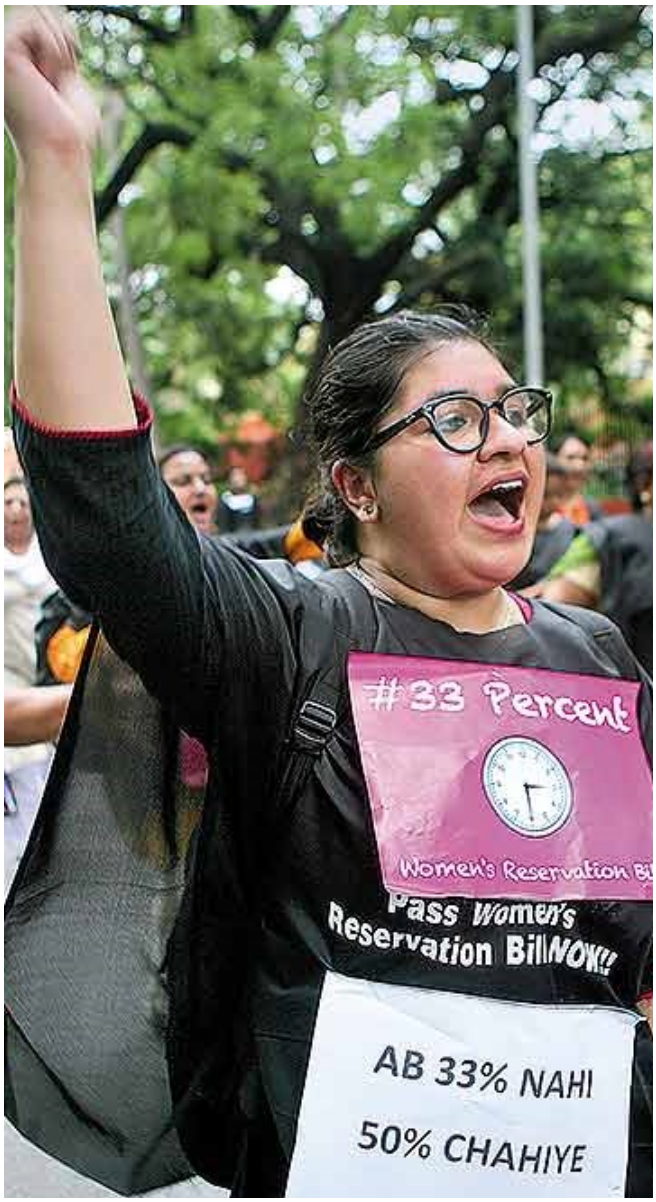

कोई मुद्दा जब तक सड़कों पर आन्दोलन का रूप नहीं लेता, तब तक ना सरकार ध्यान देती है और ना कानून। महिला फेडरेशन और गीता मुखर्जी इस बात को समझ चुकी थी। साथ ही वामपंथी महिला संगठनों की साफ समझ बनी कि जब तक शीर्ष पर निर्णय लेने वाले अवयवों में महिला प्रतिनिधियों की सशक्त भागीदारी नहीं रहेगी तब तक महिलाओं को मिले कानूनी हक का उनके पक्ष में अनुपालन नहीं हो सकेगा।

सांसद एवं भारतीय महिला फेडरेशन की उपाध्यक्ष रहीं स्व. गीता मुखर्जी का है। गीता दी के नेतृत्व में भारतीय महिला फेडरेशन ने राष्ट्रीय एवं राज्यों के स्तर पर लगातार संघर्ष किया तभी जाकर यह मुद्दा बन सका।

स्व. गीता मुखर्जी के द्वारा संसद एवं विधानसभाओं में एक–तिहाई महिला आरक्षण बिल 12 दिसम्बर, 1696 को 81वां संशोधन के रूप में तत्कालीन प्रधानमंत्री देवगौड़ा की संयुक्त सरकार को सौपा गया था। उम्मीद थी कि जिस तरह पहले सभी सांसदों से सहयोग करने का आश्वासन मिला था, यह आसानी से पेश होगा और पास भी होगा। लेकिन हुआ उल्टा। कई तरह के अड़चन लगाकर पुरुषसत्तामक विचारों के सांसदों ने इस बिल पर पुनर्विचार के लिये मजबूर किया और दोबारा इसे 'संयुक्त प्रवर समिति' के पास भेज दिया गया, जिसकी अध्यक्ष गीता दी थीं। समय से पहले ही रिपोर्ट तैयार कर जैसे ही बिल को सुझावों के साथ पेश किया गया, वैसे ही सामाजिक न्याय की दुहाई देने वाली पार्टियों ने खुलकर इसका विरोध करना शुरू किया। लालू यादव, शरद यादव, रामकृपाल यादव, मुलायम सिंह यादव सभी ने यह कह कर विरोध किया कि इससे पिछड़े वर्ग की महिलाओं को आरक्षण का लाभ नहीं मिलेगा बल्कि इसका लाभ परकटी और बलकटी महिलाओं को ही होगा। सच्चाई यह थी कि रातों–रात 181 सीटें गंवाने का खतरा वे नहीं उठाना चाहते थे।

मेरी यह स्पष्ट समझ है कि कोई मुद्दा जब तक सड़कों पर आन्दोलन का रूप नहीं लेता, तब तक ना सरकार ध्यान देती है और ना कानून। महिला फेडरेशन और गीता मुखर्जी इस बात को समझ चुकी थी। साथ ही वामपंथी महिला संगठनों की साफ समझ बनी कि जब तक शीर्ष पर निर्णय लेने वाले अवयवों में महिला प्रतिनिधियों की सशक्त भागीदारी नहीं रहेगी तब तक महिलाओं को मिले कानूनी हक का उनके पक्ष में अनुपालन नहीं हो सकेगा।

आरक्षण के लिये संसद से सड़क तक संघर्षों का दौर चल पड़ा। केन्द्रीय और राज्यों के स्तर पर आन्दोलन प्रारम्भ हो गया। 20 नवम्बर, 1996 को दिल्ली में सात महिला संगठनों द्वारा एक साथ संसद भवन के सामने संयुक्त प्रदर्शन किया गया जिसमें भारतीय महिला फेडरेशन की महत्वपूर्ण भूमिका रही। इस विधेयक के समर्थन में पूरे देश में हस्ताक्षर अभियान शुरू किया गया। बिल को व्यापक बनाने के लिये राज्यों में लगातार कार्यक्रमों का दौर चला।

बिहार में भी सभी प्रबुद्ध वर्ग की महिलाओं, स्कूल और कॉलेज के साथियों के साथ सभी जनसंगठनों का लंबा संयुक्त अभियान समर्थन में चला। बिहार में 'महिला आरक्षण समर्थक संघर्ष मोर्चा' बनाकर 17 जुलाई 1998 को राज्यस्तरीय प्रदर्शन पटना की सड़कों पर किया गया। इसी दौरान दो घंटे तक डाकबंगला चौराहा का घेराव किया गया। वह भी बारिश में भींगते हुए। सड़कों पर महिला आरक्षण के समर्थन में लगातार नारा

संघर्ष

लगाती रहीं।

1. केन्द्र सरकार आरक्षण की नीति पर टालमटोल बंद करो;
2. आधी आबादी के साथ विश्वासघात करना बंद करो; जैसे नारे गूँजते रहे।
3. पटना स्टेशन गोलम्बर पर संयुक्त संगठनों का दो दिवसीय धरना दिया गया। प्रधानमंत्री विश्वनाथ प्रताप सिंह और अटल बिहारी वाजपेयी भी अपने प्रधानमंत्रित्व काल में इसे पास नहीं करा सके क्योंकि नीयत साफ नहीं थी।

अगले अभियान के तहत सम्पूर्ण भारत के महिला संगठनों द्वारा एक करोड़ महिलाओं के हस्ताक्षर का पुलिन्दा 'विश्व महिला संगठन' द्वारा संयुक्त राष्ट्र के सचिव कोफी अन्नान को ग्लोबल मार्च के अवसर पर सौंपा गया। दूसरी तरफ राज्यों के गर्वनरों को हस्ताक्षर और साथ में ज्ञापन भी सौंपा गया ताकि महिला आरक्षण के लिये मजबूत दवाब बनाया जा सके।

संघर्ष जारी था। एक संयुक्त धरना स्टेशन गोलम्बर पटना में दिया गया। दूसरी तरफ राष्ट्रीय स्तर पर चुनाव अभियान के दौरान सभी राजनीतिक पार्टियों से मिलकर मांग की गई कि संसद में बिल को पारित कराने में अपना सहयोग दें।

1998–1999 में प्रधानमंत्री वाजपेयी जी के पूर्ण आश्वासन के बाद भी सर्वानुमति के नाम पर आरक्षण बिल लटका दिया गया। फेडरेशन का अगला अभियान श्री मनमोहन सिंह के प्रधानमंत्रित्व काल में शुरू हुआ। वर्ष 2006 के अन्तराष्ट्रीय महिला दिवस के अवसर पर धोती और साड़ी पर हस्ताक्षर अभियान चलाया गया और जंतर–मंतर पर 28 जुलाई, 2006 से 27 दिनों तक क्रमबद्ध धरना का आयोजन किया गया। धरना स्थल पर हस्ताक्षर किये हुए धोती और साड़ी की प्रदर्शनी लगायी गयी। सभी राज्यों को तीन दिनों का धरना कार्यक्रम करना था। बिहार से भी 300 महिलाओं को लेकर धरना दिया गया। लेकिन सहयोगी पार्टियों के विरोध के कारण बात आगे नहीं बढ़ी।

समर्थन में संघर्ष लगातार चलता रहा। और दोबारा जब 2009 में यू.पी.ए.आई की सरकार बनी तो राष्ट्रीय और प्रान्तीय स्तर पर संयुक्त धरना का आयोजन किया गया। पटना के कारगिल चौक पर संयुक्त आवाज बुलंद हुई और अंततः संसद के अंदर भी महिला सांसदों का दबाव रंग लाया और 2010 में महिला आरक्षण बिल राज्यसभा में पास हो गया।

महिला सांसदो ने जश्न मनाया। हम सभी ने मनाया। सोनिया गांधी के यू.पी.ए. की अध्यक्ष होने से, लोकसभा में अवश्य पारित होगा, की उम्मीद भी जगी। लेकिन ऐसा हो ना सका। 2011 से 2014 तक महिला संगठनों ने लगातार प्रयास किया कि पास हो लेकिन विफलता ही हाथ लगी।

आज 2014 के बाद बी.जे.पी. की सरकार की नींद अब खुली और नये संसद भवन में विशेष सत्र बनाए। महिला आरक्षण बिल को नया नाम देकर पारित किया गया। लेकिन समय सीमा और बिल की शर्तों को लेकर मन में शंका जरूर है। कानून अभी बना और लागू जनगणना एवं परिसीमन के बाद 2029 में होगा। इस पर क्या कहा जाय। उम्मीद ही कर सकते है कि अब आगे सबकुछ हम महिलाओं की मांगों के अनुरूप होगा।

सलाम

जिन्होंने जलाई आंदोलन की मशालें

बेगम जहांआरा शाहनवाज

(फोटो: आवाज द वॉइस)

बेगम जहांआरा शाहनवाज महिलाओं के अधिकारों, विशेषकर वोट देने के अधिकार की निरंतर खोज के लिए भारतीय इतिहास में एक विशेष स्थान रखती हैं। चूंकि लंबे समय से लंबित महिला आरक्षण विधेयक संसद के दोनों सदनों में पारित होने के बाद अब कानून की शक्ल ले चुका है, इसलिए उनके महत्वपूर्ण योगदान को याद करना उचित है।

एक पथप्रदर्शक के रूप में जहांआरा शाहनवाज की यात्रा तब शुरू हुई जब उन्होंने केवल दो महिला प्रतिनिधियों में से एक के रूप में प्रथम गोलमेज सम्मेलन (आरटीसी) में भाग लिया। उन्होंने दूसरे और तीसरे आरटीसी में महिलाओं के अधिकारों की वकालत करना जारी रखा, जहां वह तीन महिला प्रतिनिधियों में से एक और अंततः एकमात्र महिला प्रतिभागी के रूप में खड़ी रहीं। साइमन कमीशन के संबंध में भारतीय नेताओं की चिंताओं को दूर करने के लिए लंदन में बुलाई गई आरटीसी ने जहांआरा को 160 मिलियन भारतीय महिलाओं का प्रतिनिधित्व करने के लिए एक मंच प्रदान किया। उन्होंने महिलाओं के अधिकारों के प्रति भारतीय आकांक्षाओं को उत्साहपूर्वक व्यक्त किया, उनकी भागीदारी के ऐतिहासिक महत्व को रेखांकित किया और मतदान के विशेषाधिकारों की वकालत की। जहांआरा के अथक प्रयास इंग्लैंड तक फैले, जहां उन्होंने भारतीय महिलाओं के मताधिकार के लिए सक्रिय रूप से पैरवी की। उन्होंने भारतीय महिलाओं के मतदान के अधिकार के लिए प्रभावशाली ब्रिटिश महिलाओं के साथ मिलकर काम किया। 1935 में, अंततः भारत सरकार अधिनियम लागू किया गया, जिससे 600,000 से अधिक महिलाओं को वोट देने का अधिकार दिया गया और विधानसभाओं में आरक्षण स्थापित किया गया। हालांकि यह सार्वभौमिक वयस्क मताधिकार के लिए जहांआरा की आकांक्षा से कम रह गया, लेकिन इसने भारतीय महिलाओं के लिए एक महत्वपूर्ण जीत दर्ज की। 1937 के चुनावों में, 80 महिलाएं प्रांतीय विधान सभाओं के लिए चुनी गईं, जिससे इतिहास बन गया। बेगम जहांआरा शाहनवाज के अग्रणी प्रयासों ने भारतीय महिलाओं को लोकतांत्रिक प्रक्रिया में पूरी तरह से भाग लेने का मार्ग प्रशस्त किया, जिससे यह सुनिश्चित हुआ कि उनकी आवाज सुनी गई और उनके अधिकारों को मान्यता दी गई। उनकी विरासत महिलाओं की पीढ़ियों को भारत और उसके बाहर समानता और सशक्तिकरण की वकालत करने के लिए प्रेरित करती है।

सलाम

जिन्होंने जलाई आंदोलन की मशालें

गीता मुखर्जी

गीता मुखर्जी को 27 साल पहले संसद में महिला आरक्षण बिल पेश करने का श्रेय हासिल है, और ये काम गीता मुखर्जी ने प्राइवेट मेंबर बिल के जरिये किया था। गीता मुखर्जी को महिला अधिकारों का सबसे बड़ा पैरोकार माना जा सकता है क्योंकि 1996 के बाद से तो गीता मुखर्जी ने महिला आरक्षण के लिए बाकी सारी चीजों का परित्याग ही कर दिया था।

अपने आस–पास के लोगों के बीच गीता दी के नाम से लोकप्रिय गीता मुखर्जी अत्यंत मृदुभाषी और साधारण जिंदगी जीने की पक्षधर रहीं। तभी तो दिल्ली से हावड़ा के बीच जब भी आना जाना होता रहा, स्लीपर क्लास से ही चलना पसंद करती थीं। 7 बार सांसद रह चुकी किसी शख्सियत के लिए ये तो असाधारण बात ही कही जाएगी। 12 सितंबर 1996 को संसद में प्राइवेट मेंबर बिल पेश कर गीता मुखर्जी ने भारतीय राजनीति में बहुत महत्वपूर्ण पहल की थी– और ये भी देखिये कि 27 साल बाद सितंबर के महीने में ही बिल संसद से पास होकर कानून बना।

1996 में ही गीता मुखर्जी ने संसद और विधानसभाओं में महिलाओं के लिए 33 फीसदी आरक्षण दिये जाने की मांग रखी थी। तब एच.डी. देवगौड़ा देश के प्रधानमंत्री थे, और यूनाइटेड फ्रंट की 13 राजनीतिक दलों के गठबंधन की सरकार थी। तब भी आलम यही था कि सरकार में शामिल जनता दल और कुछ अन्य पार्टियों के सांसद महिला आरक्षण के पक्ष में नहीं थे। विरोध को देखते हुए आखिरकार विधेयक को सीपीआई सांसद गीता मुखर्जी के नेतृत्व वाली संयुक्त समिति के समक्ष भेज दिया गया था। लोकसभा का कार्यकाल खत्म होते ही, विधेयक की भी उम्र पूरी हो गयी। तब और अब में फर्क बस ये आया है कि यह विधेयक पुरानी संसद की जगह नये संसद भवन में पास हुआ और इसका नाम भी बदल कर नारी शक्ति वंदन अधिनियम कर दिया गया है। छात्र राजनी. ति से एंट्री लेने वाली गीता मुखर्जी ने 1980 से 2000 तक पंसकुरा चुनाव क्षेत्र का सात बार लोकसभा में प्रतिनिधित्व किया था। आखिरी बार वो 1999 में लोकसभा सदस्य बनी थीं। उससे पहले वो 1967 से 1977 के बीच चार बार पंसकुरा पूर्बा क्षेत्र से विधायक रह चुकी थीं। पहली बार वो सीपीआई की स्टेट काउंसिल के सदस्य के रूप में चुनी गयी थीं। 4 मार्च, 2000 को उनका निधन हो गया था। गीता मुखर्जी पूर्व केंद्रीय गृह मंत्री इंद्रजीत गुप्ता की छोटी बहन थीं और जाने–माने कम्युनिस्ट नेता बिश्वनाथ मुखर्जी की पत्नी।

(साभारः www.aajtak.in)

1952
पटना नगरपालिका
CITY OF PATNA

पटना नगर निगम

नागरिक सुविधाओं के लिए

WHATSAPP

Chat BOT

9264447449

पर Hi लिखकर WHATSAPP करें

Simply send

Hi

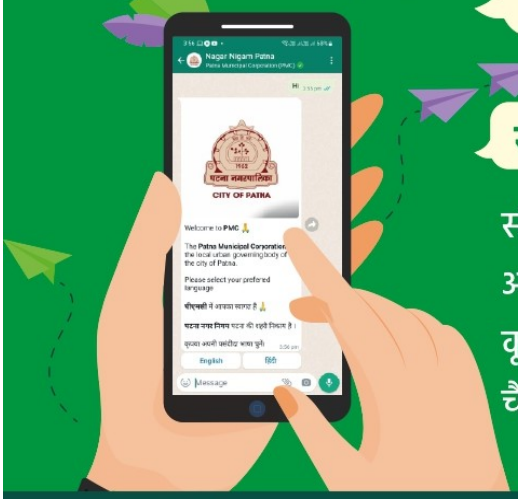

सेवाओं का चयन करें

- संपत्ति कर का भुगतान करे
- अपनी शिकायत दर्ज करें
- कूड़े की गाड़ी का लोकेशन देखे
- चैती छठ के लिए नजदीकी घाट देखे।

हेल्पलाइन नम्बर 155304

@cityofpatna www.pmc.bihar.gov.in

लंबी लड़ाई

महिला आरक्षण विधेयक की महिलाएं

इंदु अग्निहोत्री

सेवानिवृत्त प्रोफेसर और महिला विकास अध्ययन केंद्र, नई दिल्ली की पूर्व निदेशक

हो सकता है कि मोदी के नेतृत्व वाली सरकार के सामने अगले चुनावों को ध्यान में रखते हुए महिला आरक्षण विधेयक को अपनाने की अपनी मजबूरियां हों, लेकिन महिलाओं के लिए आरक्षण की आवश्यकता पर चर्चा का एक लंबा इतिहास है। जैसा कि सर्वविदित है, स्वतंत्रता संग्राम के दौरान और संविधान सभा में, महिला सदस्यों ने आरक्षण के खिलाफ मुखर रूप से तर्क दिया था और पूर्व लोकसभा सदस्य रेणुका रे ने निर्णायक रूप से कहा था, ''अगर महिलाओं के लिए सीटों का आरक्षण होगा, तो सामान्य सीटों के लिए उनके विचार का सवाल ही नहीं उठता, चाहे वे कितनी भी सक्षम क्यों न हों।

हमारा मानना है कि अगर केवल क्षमता पर ही ध्यान दिया जाए तो महिलाओं को अधिक मौके मिलेंगे।'' उन्होंने तर्क दिया कि आरक्षण ''हमारे विकास में बाधा और हमारी बुद्धिमत्ता और क्षमता का अपमान होगा।'' 128वें संशोधन के पारित होने के संदर्भ में, महिला आंदोलन में बहस में बदलाव को प्रासंगिक बनाना महत्वपूर्ण है।

स्वतंत्रता के बाद का काल

1974 में भारत में महिलाओं की स्थिति पर एक समिति ने आजादी के बाद से महिलाओं की स्थिति की सबसे व्यापक समीक्षा की। रिपोर्ट में ''पर्याप्त प्रतिनिधित्व प्राप्त करने में महिलाओं द्वारा अनुभव की जा रही कठिनाइयों'' और ''महिला विधायकों की संख्या में गिरावट'' पर विशेष ध्यान दिया गया, जिसके परिणामस्वरूप महिलाएं ''जीवन में अपनी स्थितियों को बदलने के लिए राजनीतिक प्रक्रिया में विश्वास खो सकती हैं, और, राजनीतिक व्यवस्था से बाहर निकल सकती हैं और/या तो निष्क्रिय भागीदार या विद्रोही बन सकती हैं।''

हालाँकि, समिति के सदस्यों ने आरक्षण की सिफारिश नहीं करने का फैसला किया, जिसने इसके दो सदस्यों को एक असहमति नोट प्रस्तुत करने के लिए प्रेरित किया। नोट में, प्रोफेसर लोतिका सरकार और वीना मजूमदार (वीना समिति की सदस्य सचिव भी थीं) ने बताया कि वे कभी भी किसी भी रूप में विशेष प्रतिनिधित्व या वर्ग प्रतिनिधित्व की समर्थक नहीं रही हैं,

लंबी लड़ाई

फिर भी, उन्हें इस प्रश्न का सामना करने और समिति में बहुमत के दृष्टिकोण से असहमत होने के लिए मजबूर होना पड़ा क्योंकि ''एक राजनीतिक व्यवस्था केवल विचारधारा पर आधारित नहीं हो सकती है, बल्कि उसे सामाजिक स्थिति की वास्तविकताओं के करीब रहना चाहिए और समाज के वांछित लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए अपने संचालन को समायोजित करना चाहिए।'' सिस्टम की मशीनरी यदि समाज की जरूरतों को पूरा नहीं करती है तो लंबे समय में यह हमारे अंतिम उद्देश्य को परास्त कर सकती है। यही कारण है कि हम इस बिंदु पर समिति के फैसले से असहमत होने के लिए मजबूर हैं।''

इन टिप्पणियों ने स्थानीय निकायों पर विशेष ध्यान देने के साथ राजनीतिक निकायों में महिलाओं की भागीदारी पर दीर्घकालिक चर्चा की शुरुआत की। उन्होंने पंचायती राज व्यवस्था और संघवाद के सिद्धांतों को आगे बढ़ाने के लिए शासन के हिस्से के रूप में वित्तीय हस्तांतरण के सिद्धांत पर चर्चा शुरू की तथा ये पहलू 1977 में अशोक मेहता समिति से शुरू होने के बाद से 1980 के दशक के दौरान कई समितियों में बहस का विषय बने रहे।

इस प्रकार 1980 के दशक में स्थानीय स्तर पर सहभागी शासन के पहलू और इन प्रक्रियाओं में महिलाओं की अनुपस्थिति, दोनों पर चर्चा शुरू हुई– जिनमें से बाद वाला बिंदु राजनीतिक संस्थानों और पुनरुत्थान महिला आंदोलन द्वारा व्यक्त महिलाओं की बदलती आकांक्षाओं के बीच असंगति की ओर इशारा करता है।

1989 का 64वां संशोधन विधेयक– जो पारित नहीं हो सका– ने महिला आंदोलन को लेकर निराशाओं के साथ–साथ विरोधाभासों को भी दर्शाया, क्योंकि नामांकन की प्रक्रिया के जरिये स्थानीय निकायों में सहयोजित होने के उनके किसी भी प्रयास को अस्वीकार कर दिया गया। संविधान में 73वां और 74वां संशोधन आंशिक रूप से, इसी इतिहास और विविध कारकों के संयोजन से जुड़ा है। इनमें शामिल हैं: कर्नाटक जिला परिषद, तालुक पंचायत समिति, मंडल पंचायत और न्याय पंचायत अधिनियम, 1983 के पारित होने के बाद कर्नाटक के स्थानीय निकायों में महिलाओं के लिए आरक्षण के बाद की जमीनी स्थितियां, जिसने स्थानीय निकायों में महिलाओं के बीच रुचि पैदा की। इसके बाद पूर्व प्रधानमंत्री राजीव गांधी ने महिलाओं के लिए आरक्षण लागू करने की इच्छा जताई, इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि 1984 में उन्हें मिले भारी जनादेश का श्रेय महिला मतदाताओं को भी जाता है, साथ ही नीति निर्माताओं और नौकरशाहों ने सीएसडब्ल्यूआई की सिफारिशों का पालन किया, जिसने 1992 में महिलाओं के लिए 33% आरक्षण के लिए 73वें और 74वें संवैधानिक संशोधन को पारित होने को सुनिश्चित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई थी।

समाज के उच्च स्तर पर दोनों संशोधनों पर चर्चा को लेकर तमाम संशय के बावजूद, महिलाओं के बीच जो उत्साह पैदा हुआ, वह दिखाई दे रहा था और इसने उच्च विधायी निकायों में महिलाओं के लिए आरक्षण पर बहस को आगे बढ़ाया।

हालांकि ये आधिकारिक हलकों में हुए घटनाक्रम थे, फिर भी आंदोलन ने महिलाओं को लगातार हाशिए पर जाते हुए देखा था और इसी के कारण उन्होंने विधायी प्रक्रिया के जरिये बढ़े हुए प्रतिनिधित्व की मांग और तेज कर दी। 1990 के दशक तक राजनीति में बढ़ते अपराधीकरण और बाहुबल व धनबल के इस्तेमाल की पृष्ठभूमि में महिलाओं के लिए चुने जाने के अपने संवैधानिक

लंबी लड़ाई

अधिकार पर जोर देने की चुनौती स्पष्ट रूप से दिखाई देने लगी थी। यह तब और भी स्पष्ट हो गया जब चुनावी लड़ाई गठबंधन राजनीति के चरण में प्रवेश कर गई।

इन महत्वपूर्ण संशोधनों के पारित होने को सुनिश्चित करने में बड़ी भूमिका निभाने वाली वरिष्ठ नौकरशाह निर्मला बुच ने कहा कि "राजनीति में महिलाओं की अरुचि और निष्क्रियता के बारे में मिथक बनाए गए थे, और कहा गया कि कैसे संपन्न वर्गों के प्रभावशाली राजनेताओं की महिला रिश्तेदारों ने इन सीटों पर कब्जा कर लिया था जबकि वास्तव में कार्यों को पुरुष ही अंजाम देते थे।'' उन्होंने डेटा के साथ इसका प्रतिवाद किया जिसने इन कहानियों को खारिज कर दिया और आर्थिक रूप से कमजोर वर्गों के युवाओं, पहली बार प्रवेश करने वाली महिलाओं के काम और उनकी भागीदारी और प्रदर्शन के स्तर का दस्तावेजीकरण किया। उन्होंने ''सार्वजनिक पितृसत्ता की चुनौती की ओर ध्यान आकर्षित किया, जिसके तहत महिलाओं को शामिल तो किया जाता है, लेकिन भाग लेने की अनुमति नहीं दी जाती है और उनके काम को लगातार कम आंका जाता है'' और जो महिलाएं पंचायत चुनाव लड़ती हैं, वे आरक्षण के अभाव में ऐसा नहीं कर पातीं। उनके लिए, रोटेशन के मुद्दों और ऐसे मामलों से निपटने में विफलता ''राष्ट्रीय और राज्य विधानमंडलों में आरक्षण के मुद्दे को हल करने के लिए गंभीर प्रयासों की कमी को दर्शाती है, जिससे यह महिला आरक्षण विधेयक पर गतिरोध से ध्यान हटाने की एक रणनीति की तरह प्रतीत होता है।" 1995 में महिला संगठनों ने एक स्पष्ट बयान जारी किया कि ''पंचायतों में वर्तमान आरक्षण को बढ़ाकर महिलाओं की राजनीतिक भागीदारी को प्रोत्साहित करने की आवश्यकता है'' और उन्होंने राज्य विधानसभाओं और संसद में कम से कम 33% आरक्षण की मांग की।

इसे सात राष्ट्रीय संगठनों द्वारा जारी किया गया था: अखिल भारतीय लोकतांत्रिक महिला संघ (एआईडीडब्ल्यूए), अखिल भारतीय महिला दक्षता समिति (एआईएमडीएस), अखिल भारतीय महिला सम्मेलन (एआईडब्ल्यूसी), महिला विकास अध्ययन केंद्र (सीडब्ल्यूडीएस), संयुक्त महिला कार्यक्रम (जेडब्ल्यूपी), द नेशनल फेडरेशन ऑफ इंडियन वुमेन (एनएफआईडब्ल्यू), यंग वुमेन क्रिश्चियन एसोसिएशन (वाईडब्ल्यूसीए), इनके साथ ही पूरे भारत के 99 अन्य संगठनों ने बीजिंग में महिलाओं के राष्ट्रीय सम्मेलन 1995 की घोषणा का समर्थन किया।

1996 के चुनावों से पहले, इन सात राष्ट्रीय संगठनों ने राष्ट्रीय राजनीतिक दलों से एक सार्वजनिक अपील की और अपने घोषणापत्रों में महिलाओं के लिए विधानसभाओं और संसद में न्यूनतम एक–तिहाई सीटें तुरंत सुनिश्चित करने के लिए संविधान में आवश्यक संशोधन करने की प्रतिबद्धता को शामिल करने के लिए कहा। महिला संगठनों के प्रतिनिधियों ने सभी राष्ट्रीय दलों के नेताओं से मुलाकात की और इस विषय पर बहस पर जोर दिया, जिस पर उन्हें अलग–अलग प्रतिक्रियाएं मिलीं।

इन हस्तक्षेपों के बाद ही 1996 में देवेगौड़ा के नेतृत्व वाली संयुक्त मोर्चा सरकार ने प्रमिला दंडवते द्वारा संचालित विधायी निकायों में महिलाओं के लिए 33% आरक्षण के लिए 81वां संविधान संशोधन विधेयक पेश किया। इस विधेयक को संसद की चयन समिति को भेजा गया, जिसे लोकप्रिय रूप से गीता मुखर्जी समिति के नाम से जाना जाता है। महिला संगठनों ने नवंबर 1996 में एक बैठक और समिति को एक ज्ञापन देकर अपने प्रयासों को आगे बढ़ाया। विधेयक के विभिन्न संस्करणों का बाद का इतिहास अच्छी तरह से प्रलेखित है, जिसमें 2008 में कानून और न्याय पर दूसरी संसदीय समिति का संदर्भ भी शामिल है।

पिछले तीन दशकों में महिला संगठनों ने सभी पहलुओं पर बहस जारी रखी है और कहा है कि सभी पहलुओं पर रचनात्मक बहस की अनुमति देने के लिए विधेयक को संसद में लाया जाना चाहिए। इन दशकों में शायद ही कोई संवैधानिक प्राधिकारी होगा जिसके पास बहस के लिए दबाव डालने के लिए संगठनों ने संपर्क नहीं किया हो, यहां तक कि उप–आरक्षण के लिए कोटा और खंड के संबंध में आंदोलन के भीतर एक उग्र बहस भी चल रही थी।

आज, जब विशेष रूप से हाशिए पर रहने वाले समूहों और समुदायों की महिलाओं के संदर्भ में कानून को समावेशी बनाने के लिए तंत्र की आवश्यकता के बारे में बहस चल रही है, तो यह याद करना सार्थक होगा कि भारत में महिला अध्ययन के दो अग्रणी, सरकार और मजूमदार ने अपने असहमति नोट में बताया, "जब कोई जबरदस्त असमानताओं वाले समाज में लोकतंत्र के सिद्धांत को लागू करता है, तो ऐसी विशेष सुरक्षा असमानता की बाधाओं को भेदने के लिए केवल एक नोक ही होती है। एक अप्राप्य लक्ष्य उतना ही निरर्थक है जितना कि एक अधिकार जिसका प्रयोग नहीं किया जा सकता। अवसरों की समानता उन जबरदस्त अक्षमताओं और बाधाओं के सामने हासिल नहीं की जा सकती है जो सामाजिक व्यवस्था उन सभी वर्गों पर थोपती है जिन्हें पारंपरिक भारत दूसरे दर्जे या यहां तक कि तीसरे दर्जे के नागरिक के रूप में मानता है।''

(साभार: thewire.in)

Sudha
Milk and Milk Products
वादा शुद्धता का

Empowering Women through Dairy Co-operatives

India is a leading dairy economy with a vast number of milk producers organized into mixed-gender cooperatives. **COMFED** also undertakes supportive activities of Milk Producers for income and social security which includes 4258 Women Dairy Co-operatives exclusively run by women.

COMFED giving them opportunities to emerge as leaders in taking decisions and to participate in day-to-day dairy activities to make a positive change in their lives and to their families.

Supportive Programmes & Benefits:

- **Sat Nischay-2**, an ambitious scheme of the State Government under **"Aatamnirbhar Bihar 2020-25"** with an objective to improve access to Milk Co-operatives and provide good quality Sudha Products
- Provides Balanced Cattle feed
- Artificial Insemination Programme & inclusion in Management Committee
- Cattle Insurance, Cattle Purchase on Subsidy & Vaccination
- Assistance in installation of Biogas Plant
- Around 13 lakh families are benefitted

COMFED

BIHAR STATE MILK CO-OPERATIVE FEDERATION LTD.

E-mail: comfed.patna@gmail.com • Toll Free No.: 18003456199 • www.sudha.coop

Dairy Entrepreneurship - Empowering women, empowering life

Dot Communications_Comfed_Women Empowerment_Magazine Ad_Size A4

सियासी हथकंडा

महिला आरक्षण कानून

महिलाओं के साथ फिर छल

मीना तिवारी

भाकपा (माले) केन्द्रीय कमेटी की सदस्य व ऐपवा महासचिव, सदस्य, पोलित ब्यूरो सीपीआई एमएल

विगत 27 वर्षों से जो महिला आरक्षण बिल पास होने की प्रतीक्षा में था, वह अचानक दो दिनों के भीतर संसद के दोनों सदनों में पेश हुआ और पास भी हो गया। नये संसद भवन में विशेष सत्र बुलाकर 19 सितंबर को विधेयक पेश किया गया। इस अवसर पर प्रधानमंत्री मोदी ने कहा कि ईश्वर ने उन्हें कुछ विशेष कार्यों को पूरा करने के लिए चुना है। उन्होंने इस विधेयक को नारी शक्ति वंदन विधेयक कहा, लेकिन जब पूरा विधेयक सामने आया तो स्पष्ट हुआ कि वंदना के नाम पर एक बार फिर औरतें छली गई हैं। शायद यह पहला कानून होगा जिसके लागू होने का समय नहीं बताया गया है। विधेयक में प्रावधान है कि नई जनगणना के आधार पर सीटों के परिसीमन के बाद महिला आरक्षण लागू होगा। (क्या यह व्यवस्था भी ईश्वरीय आदेश से की गई है, इसे मोदी जी ने स्पष्ट नहीं किया)

यह बात समझ से परे है कि महिला आरक्षण के लिए जनगणना की क्या जरूरत है। जनसंख्या में लगभग आधी संख्या महिलाओं की है, क्या यह तथ्य नई जनगणना में बदल जाएगा? ऐसा भी नहीं है कि यह सरकार जातीय जनगणना करवा कर ओबीसी और अल्पसंख्यक महिलाओं

सियासी हथकंडा

के लिए विशेष कोटा देने का विचार रखती है। 2021 में होने वाली जनगणना स्थगित कर दी गई थी और आगे यह कब होगी यह भी सरकार ने स्पष्ट नहीं किया है। परिसीमन एक जटिल और समय लेने वाली प्रक्रिया है जिसके बारे में अभी कोई अनुमान नहीं लगाया जा सकता। इसलिए, महिला आरक्षण कानून फिलहाल ठंडे बस्ते में ही रहेगा।

जब आरक्षण लागू नहीं करना था तो विधेयक पेश करने में इतनी गोपनीयता और जल्दबाजी क्यों की गई? क्या इसे दुनिया भर में बदनाम हो रही छवि और देश भर में सरकार के खिलाफ महिलाओं में बढ़ते असंतोष की भरपाई के लिए लाया गया? बिलकीस बानो के बलात्कारी, हत्यारों को संस्कारी ब्राह्मण बता कर रिहा करने, महिला पहलवानों के यौन उत्पीड़क भाजपा सांसद और कुश्ती संघ के अध्यक्ष बृजभूषण शरण सिंह को खुला संरक्षण और न्याय की मांग करती महिला पहलवानों को दिल्ली की सड़कों पर पुलिस द्वारा घसीटे जाने, मणिपुर में दो महिलाओं को नग्न घुमाने, सैकड़ों महिलाओं पर क्रूरतम और बद्तर यौन हिंसा, बलात्कार, हत्या की घटनाओं पर प्रधानमंत्री की चुप्पी जैसी अनगिनत घटनाओं से महिलाओं में इस सरकार के प्रति गुस्सा बढ़ रहा है तो प्रधानमंत्री को नारी शक्ति वंदन की याद आई और अब तक की सर्वाधिक महिला विरोधी सरकार ने यह विधेयक पेश कर अपनी छवि सुधारने की कोशिश की। प्रधानमंत्री और उनके दल को शायद यह भी उम्मीद थी कि विपक्ष की बढ़ती एकजुटता को वह इस बिल के जरिए तोड़ देंगे। अब तक ओबीसी और अल्पसंख्यक महिलाओं के लिए कोटा के भीतर कोटा के सवाल पर ही तो ये पार्टियां बंटी हुई थीं और बिल अब तक टलता रहा था, लेकिन भाजपा इन दोनों में से कुछ भी हासिल नहीं कर पाई। न तो महिलाएं उसके झांसे में आईं, न विपक्ष की एकजुटता में वह सेंध लगा सकी।

27 वर्षों के बाद जब यह विधेयक नए सिरे से पेश हो रहा था तो निश्चय ही उसमें कोटा के भीतर कोटा का सवाल हल किया जाना चाहिए था। इन वर्षों में समाज में सामाजिक न्याय के बारे में विमर्श और समझदारी बढ़ी है। आज सामाजिक न्याय की बात सिर्फ वंचित समुदायों के पुरुषों के लिए नहीं हो सकती। इन समुदायों की महिलाएं अपने समुदाय के भीतर भी गैर बराबरी और वंचना झेलती हैं और उसे भी संबोधित किया जाना जरूरी है। पितृसत्तात्मक समाज व्यवस्था में हर समुदाय की महिलाएं दोयम दर्जे की स्थिति में रहती हैं किंतु दलित, पिछड़े, अल्पसंख्यक समुदाय की महिलाएं दोहरे उत्पीड़न और वंचना की शिकार होती हैं। शिक्षा और रोजगार के मामले में आम महिलाओं की हिस्सेदारी पुरुषों से कम है वहीं इन समुदायों की महिलाओं के हिस्सेदारी तथाकथित ऊंची जाति की महिलाओं और अपने समुदाय के पुरुषों से कम है। मुस्लिम महिलाएं तो शिक्षा और रोजगार के मामले में अति वंचित हैं इसलिए आरक्षण के भीतर आरक्षण महिलाओं की समरूपता पर आधारित एकता बढ़ाने में मददगार होगा।

किसी भी जीवंत लोकतंत्र की पहचान यह है कि वह देश के वंचित–उत्पीड़ित समुदाय, जाति, जेंडर को बराबरी का अवसर हासिल करने के उसके अधिकार के प्रति कितना सजग और सक्रिय है। इस संदर्भ में खास तौर पर महिलाओं के मामले में भारत का रिकॉर्ड बहुत खराब है। चुनी हुई महिला सांसदों में दुनिया के 193 देशों की सूची में भारत 150वें स्थान पर है। पाकिस्तान, बांग्लादेश, नेपाल जैसे देश भी हमसे आगे हैं। भारत में 1952 में 24 महिलाएं लोकसभा में थीं जो संसद सदस्यों की 4.4% थीं, आजादी के 75 वर्षों बाद अभी 14.4% महिला सांसद हैं। विधानसभाओं में तो यह संख्या 10% से भी कम है। चुनाव में महिलाओं को मौका नहीं दिए जाने के पीछे तर्क दिया जाता है कि महिलाएं चुनाव नहीं जीत सकतीं इसलिए राजनी. तिक दल चाह कर भी उन्हें टिकट नहीं देते हैं, लेकिन राज्यसभा में भी महिलाओं की

संख्या 13% है जो दिखाता है कि भारत में बिना आरक्षण महिलाओं के लिए इन नीति निर्धारक संस्थानों में प्रवेश मुश्किल है। इसलिए, लोकसभा और विधानसभा ही नहीं राज्यसभा और विधान परिषदों में भी महिला आरक्षण जरूरी है।

राजनीति में अवसरों की बराबरी या न्याय का मुद्दा सामाजिक और आर्थिक न्याय के साथ जुड़ा हुआ है। इस मामले में पिछले 75 वर्षों में हम कितना आगे बढ़े हैं– ग्लोबल हंगर इंडेक्स में भारत 125 देश की सूची में 111वें स्थान पर है। यहां 58% से अधिक युवा महिलाएं एनीमिया (खून की कमी) की शिकार हैं। भारत समेत दक्षिण–पूर्व एशिया में महिलाओं पर हिंसा 37.7% है और भारत महिलाओं के लिए सर्वाधिक असुरक्षित 10 देशों की सूची में है। कन्या भ्रूण गर्भपात, ऑनर किलिंग, दहेज उत्पीड़न और हत्या तो इस देश की अपनी विशेषताएं हैं जिसकी तुलना करने के लिए शायद ही कोई देश उपलब्ध हो। ये आंकड़े एक–दूसरे से जुड़ते हैं और महिलाओं की स्थिति की संपूर्ण तस्वीर बनाते हैं। इस तस्वीर का दूसरा पहलू यह है कि महिलाओं को हर कदम पर संघर्ष करना पड़ता है तब जाकर सत्ता और सरकारें थोड़ा पीछे हटती हैं। इसलिए महिलाओं के लिए न्याय की लड़ाई आज यहां तक कैसे पहुंची, आइए, थोड़ा इसके इतिहास पर भी नजर डाल लेते हैं।

आजादी के दौर में संसद में महिलाओं के लिए आरक्षण की चर्चा हुई तो संविधान सभा की महिला सदस्यों ने इसका विरोध किया। क्यों? शायद इसलिए कि सामाजिक रूप से दमित हिस्सा अक्सर अपने हक की बात नहीं उठा पाता या शायद इसलिए कि संविधान सभा की सदस्य इन प्रबुद्ध महिलाओं को यह विश्वास था कि आजाद भारत में महिलाओं को अवसर, प्रोत्साहन और खुला माहौल स्वतः उपलब्ध होगा और वह अपनी योग्यता के बल पर संसद या विधानसभाओं में चुन ली जाएंगी। संविधान सभा में 389 सदस्यों के बीच 15 महिला सदस्य थीं। इसकी एकमात्र दलित महिला सदस्य दक्षिणायनी वेलाउधान ने कहा, ''मैं व्यक्तिगत रूप से किसी भी तरह के आरक्षण के पक्ष में नहीं हूं।'' (इकोनामिक टाइम्स 20 सितं. 23) रेणुका राय ने कहा, ''हम हमेशा मानते हैं कि जिन पुरुषों ने देश की आजादी के लिए संघर्ष किया है जब वे सत्ता में आएंगे तब महिलाओं के अधिकारों और आजादी की गारंटी होगी।'' (द हिंदू 15 मार्च 23) एकमात्र पूर्णिमा बनर्जी का वक्तव्य उद्धृत होता है जिन्होंने कहा कि महिलाएं आरक्षण नहीं मांग रही हैं लेकिन किसी महिला सांसद की सीट खाली होने पर वहां किसी महिला को ही चुना जाए। लेकिन, न तो पूर्णिमा बनर्जी का आग्रह स्वीकार्य हुआ और ना ही दक्षिणायनी या रेणुका राय का भरोसा फलीभूत हुआ।

सामंती व्यवस्था के साथ सामंजस्य बैठाते हुए अंग्रेजों की गुलामी से जो मुक्ति मिली थी उसमें आरंभ में महिलाओं को न्यूनतम अधिकारों को भी देने का संसद में विरोध हुआ था। संपत्ति, विवाह, उत्तराधिकार जैसे बुनियादी अधिकारों में पुरुषों के समान महिलाओं को अधिकार देने के लिए जो सत्तासीन ताकतें तैयार नहीं थीं वे

सियासी हथकंडा

सत्ता में महिलाओं को हिस्सेदारी कैसे दे देतीं! इसलिए महिलाओं की पूजा–अर्चना–वंदना की बात करते हुए उन्हें किनारे कर दिया गया। भारतीय संस्कृति के नाम पर पितृसत्तात्मक मूल्य राजनीति में हावी रहे और सदियों से पुरुषों के अधीन रहीं महिलाओं को बराबरी के लिए विशेष अवसर प्रदान नहीं किया गया। जैसा कि डॉक्टर अंबेडकर ने कहा था कि संविधान के जरिए ऊपरी सतह तो बराबर कर दी गई है लेकिन भीतर की जमीन बहुत ही खुरदरी और असमान है, जेंडर और जाति दोनों ही संदर्भों से इस असमान और खुरदरी जमीन पर महिलाएं आज तक चल रही हैं। बल्कि पिछले 10 वर्षों में चीजें उल्टी दिशा पकड़ चुकी हैं। वर्तमान सरकार ने इस असमानता को वैधानिक बनाने की कोशिश तेज कर दी है।

आजादी के आंदोलन में महिलाएं घरों से बाहर निकलीं तो आजादी के बाद धीरे–धीरे सार्वजनिक जीवन में उनकी भागीदारी बढ़ी। उनमें अपने अधिकारों के प्रति चेतना जगने लगी और तब वे अपने साथ होने वाले भेदभाव के खिलाफ आवाज उठाने लगीं। 20वीं सदी में वैश्विक स्तर पर महिला अधिकारों और उपनिवेशों की आजादी का संघर्ष क्रमशः जोर पकड़ता गया। 70– 80 के दशक में दुनिया भर में महिला आंदोलन को बढ़ते और सरकारों को दबाव में आते हम देख सकते हैं। संयुक्त राष्ट्र की पहल पर 1971 में भारत सरकार ने पहली बार महिलाओं की स्थिति पर एक रिपोर्ट (समानता की ओर) जारी की। संयुक्त राष्ट्र ने पहली बार 1975 में महिला दिवस मनाया और अगले 10 वर्षों के लिए महिलाओं की बेहतरी के लिए सरकारों को लक्ष्य दिया। इसके समानांतर महिला संगठन स्वतंत्र रूप से अपने हकों की बात उठाते रहे। भारत में 80–90 का दौर महिला आंदोलन के लिए महत्वपूर्ण है। यहां ग्रामीण गरीब महिलाओं और मजदूर महिलाओं के हक में वामपंथी महिला संगठन लड़ते दिखते हैं तो शहरी क्षेत्र में स्वायत्त महिला संगठन सक्रिय थे। 1988 में पर्सपेक्टिव प्लान बना जिसमें पहली बार चुनाव में आरक्षण की बात सरकार ने की। 1989 में पंचायत और नगरपालिका में महिला आरक्षण के लिए बिल पेश हुआ जो पास नहीं हो सका। 1993 में नरसिम्हा राव सरकार के समय यह बिल दोबारा पेश किया गया और पास हुआ। उसके बाद संसद और विधानसभाओं में आरक्षण की मांग बढ़ने लगी। 1996 में देवगौड़ा सरकार ने पहली बार संसद व विधानसभाओं में 33% आरक्षण के लिए बिल पेश किया लेकिन बिल पास नहीं हुआ। फिर

1998, 1999, 2002, 2003 में बिल पेश हुआ लेकिन पास नहीं हो सका। यूपीए सरकार के दौर में यह विधेयक 2008 में फिर पेश हुआ और विरोध के बाद स्टैंडिंग कमेटी को भेजा गया। 2010 में इसे राज्यसभा से पास किया गया लेकिन सपा और राजद के भारी विरोध के कारण इसे लोकसभा में पेश नहीं किया गया। इस बिल के विरोध में इन दलों का तर्क था कि इसमें पिछड़ी जाति और अल्पसंख्यक जाति की महिलाओं के लिए अलग से आरक्षण की व्यवस्था नहीं है। इन पार्टियों का सवाल बिल्कुल जायज था।

1992 के बाद पंचायत चुनाव में महिला आरक्षण का अनुभव कैसा रहा– ''गुजरात, कर्नाटक तथा पश्चिम बंगाल जैसे अनेक राज्यों से संबंधित अध्ययनों में इस बात की पुष्टि होती है कि जहां इन चुनावों का निर्वाचित महिलाओं के जीवन पर सकारात्मक असर पड़ा, वहीं इससे इलाके की वर्चस्वशाली जातियों की सत्ता और मजबूत हुई। दूसरे शब्दों में, पंचायती राज संस्थाओं के चुनावों में अपेक्षाकृत कम वर्चस्वशाली जातियों के पुरुषों की जगह दबंग जाति की महिलाओं ने घेर ली। इसलिए यह हैरानी की बात नहीं है कि महिलाओं को एकमुश्त आरक्षण से दबंग जातियों की महिलाओं और दबंग जाति समूहों का ही भला हुआ है'' (निवेदिता मेनन 2004)। लेकिन इस दौर में ओबीसी महिलाओं को 33% आरक्षण का लाभ मिले, इसके लिए कोई ठोस मांग उठाई गई हो, ऐसा हम नहीं देखते हैं। 2008 में जब बिल पेश हुआ और स्टैंडिंग कमेटी को भेजा गया तो इस स्टैंडिंग कमेटी में समाजवादी पार्टी के दो सदस्य थे। इन सांसदों ने सिफारिश की कि महिला आरक्षण 20% से अधिक नहीं हो और सीटों को आरक्षित करने के बदले राजनीतिक दल 20% टिकट महिलाओं के लिए आरक्षित करें। मुलायम सिंह यादव ने संसद में कहा कि अगर महिला आरक्षण लागू हो गया तो आडवाणी और मुरली मनोहर जोशी ने मेहनत कर जो अपनी जगह बनाई है वह छिन जाएगी। मतलब मुलायम सिंह पिछड़ी जातियों की महिलाओं पर भरोसा करने और उनके पक्ष में तर्क देने के बदले ऊंची जाति के पुरुष नेताओं को सीट खोने का भय दिखा कर उनके साथ एकता बनाने की कोशिश कर रहे थे! भाजपा जो एक बार में कई भाषा में बोलती है, इसके योगी आदित्यनाथ सरीखे नेताओं ने महिला आरक्षण का खुलकर विरोध किया और कहा कि महिलाओं को घर संभालना चाहिए यही उनकी प्रकृति के अनुकूल है। दूसरी तरफ भाजपा ने एक संसदीय क्षेत्र से दो प्रतिनिधियों के चुनाव जैसा बेतुका सुझाव दिया था।

अगर महिला संगठनों की बात करें तो स्वायत्त महिला संगठनों ने महिला आरक्षण के मुद्दे पर कभी बहुत रुचि नहीं दिखाई। वामपंथी महिला संगठन इस मुद्दे पर शुरू से ही सक्रिय थे किंतु कोटा के भीतर कोटा के बारे में उनकी समझ यह थी कि पितृसत्तात्मक समाज व्यवस्था में एक स्त्री के रूप में हर महिला दोयम दर्जे की स्थिति में है।

उनका मानना था कि लोकसभा सदस्यों की जातिगत स्थिति का बदलता स्वरूप महिलाओं के मामले में भी लागू होगा। चूंकि जाति आधारित वोट पड़ते हैं तो संख्या बल में ज्यादा होने के कारण पिछड़ी जाति की महिलाएं ज्यादा जीतेंगी ही। लेकिन ऐपवा जैसे संगठन ने महसूस किया कि मौजूदा माहौल में अगर समस्त महिलाएं पुरुषों से राजनीतिक–आर्थिक रूप से पीछे हैं और सामंती परिवेश के दबाव में हैं, आरक्षण उनकी बराबरी की दिशा में एक कदम है तो अन्य पिछड़े वर्ग की महिलाएं और अल्पसंख्यक महिलाएं भी सामंती परिवेश झेल रही हैं और ऊंची जाति की महिलाओं की तुलना में शैक्षणिक–आर्थिक रूप से ज्यादा पीछे हैं। इसलिए विशेष कोटा की मांग जायज और जरूरी है और ऐपवा ने इस मांग को मजबूती से उठाया। 2008 में बिल पेश होने के बाद एक बार फिर बहस तेज हुई। 2010 में यह बिल राज्यसभा से पास कर दिया गया किंतु लोकसभा में पेश करने से कांग्रेस पीछे हटने लगी क्योंकि सपा और राजद जैसी पार्टियों ने अपना विरोध तेज कर दिया था। तब ऐपवा ने स्पष्ट कहा कि आरक्षण के भीतर आरक्षण का प्रावधान कर बिल को पास किया जाए न कि बिल को रोकने के लिए इसे बहाने के रूप में इस्तेमाल किया जाए। राज्यों के दौरे पर निकली संसदीय टीम को ऐपवा ने ज्ञापन देकर दलित, ओबीसी और अल्पसंख्यक महिलाओं के लिए विशेष आरक्षण के प्रावधान की मांग की। 2014 में सत्ता में आने के बाद भाजपा ने इस पर चुप्पी साथ रखी थी। इस बार वह इस उम्मीद में बिल लेकर आई कि एक बार फिर समाजवादी धारा की पार्टियां इस बिल का विरोध करेंगी। लेकिन, ऐसा नहीं हुआ। इस बार सिर्फ एमआईएम के तीन सांसदों ने विरोध किया। शेष सभी दलों के समर्थन से विधेयक पारित हुआ।

आज पिछड़ी जाति के नेताओं की एक नई पीढ़ी सामने आ चुकी है जिसने ज्यादा परिपक्वता का परिचय दिया और भाजपा की चाल विफल कर दी। हां, कोटा के भीतर कोटा की मांग अभी भी पूरी नहीं हुई है। इसके लिए महिलाओं को संघर्ष तेज करने की जरूरत है। एक ऐसी सरकार भी जरूरी है जो सत्ता में आते ही महिला आरक्षण को लागू करने का वादा करे और इन सबके लिए जरूरी है कि भाजपा सरकार को सत्ता से बाहर किया जाए।

सुखद परिवर्तन

स्वयंसिद्धा हैं महिलाएं, खुलेंगे नए रास्ते

किरण घई

भारतीय जनता पार्टी की वरिष्ठ नेता। पूर्व विधान पार्षद व बिहार भाजपा का जाना–माना चेहरा हैं।

नारी शक्ति वंदन अधिनियम 2023 देश की सभी महिलाओं की जीत है, चाहे वो किसी भी पक्ष और विचारधारा की क्यों न हों। 27 साल लंबे संघर्ष को आज जो सफलता मिली है उसमें सबका योगदान रहा है। मैं नरेन्द्र मोदी की सरकार और देश की हर महिला को बधाई देती हूं और शुभकामनाएं देती हूं कि इसका प्रतिफल उन्हें प्राप्त हो। आजादी के बाद से ही राजनीति में महिलाओं की स्थिति पर ध्यान जाने लगा था। 1971 में यूएनओ की तरफ से पूछा गया कि देश में महिलाओं की क्या स्थिति है। तब सरकार ने एक कमिटी बनाई और टुवर्डस इक्वलिटी नामक रिपोर्ट में पाया गया कि हम बहुत पीछे हैं। 1975 आते–आते तक महिलाओं की चेतना में खलबली मचने लगी और इस बात पर जोर दिया जाने लगा कि महिलाओं को संसद में आरक्षण दिया जाए। इसके बाद राजीव गांधी की सरकार में पंचायतों एवं स्थानीय निकायों में 33 प्रतिशत आरक्षण की बात की गई जो अंततः नरसिम्हा राव की सरकार में लागू हो सकी। फिर भी उच्च सदनों में महिलाओं की पहुंच नहीं हो पा रही थी। भारतीय जनता पार्टी इसे लेकर आरंभ से ही प्रतिबद्ध रही थी। भले ही वामपंथी दलों का झंडा ऊंचा रहता था लेकिन व्यवहार में उनके संगठनों में महिलाओं को आरक्षण कहीं नहीं था, जबकि भाजपा के संगठन की इकाइयों में शुरू से ही एक महिला को स्थान देने का चलन था।

साल 1998, 2002, 2003 और फिर 2008 में बिल को लाया गया लेकिन कामयाबी नहीं मिली। अटल बिहारी वाजपेयी की सरकार में सुषमा स्वराज, गीता मुखर्जी और ममता बनर्जी इत्यादि ने मिलकर बिल को पारित कराने का बहुत प्रयास किया। कमेटी बनाई गई, रिपोर्ट लाई गई और सरकार ने बहुत साहस के साथ इसे सदन में रखा, लेकिन सदन में पुरुषों के बीच भय था। इस दौरान एक बेहद शर्मनाक घटना हुई जब सदन में इस बिल को रखे जाने पर राजद के एक सदस्य ने बिल की कॉपी फाड़ दी। शरद यादव ने तब एक आपत्तिजनक बयान देते हुए कहा था कि इस बिल से केवल परकटी महिलाओं को ही लाभ होगा। हालांकि बाद में उन्हें अपने इस बयान पर माफी भी मांगनी पड़ी थी।

डा. मनमोहन सिंह सरकार ने भी कोशिश की और भाजपा ने खुला समर्थन दिया लेकिन राज्यसभा में तो यह बिल पारित हो गया परंतु लोकसभा में इसे पारित नहीं कराया जा सका। उस समय भी मैंने कहा था कि यह हमारी ही नियति में है, यानि कि भाजपा ही इस बिल को पारित कराएगी। भाजपा की राष्ट्रीय कार्यकारिणी की बैठक के दौरान चेन्नई घोषणापत्र में नरेन्द्र मोदी, जो उस समय महामंत्री थे, ने कहा था कि 21वीं सदी महिलाओं की सदी होगी। कोई भी राजनीतिक दल महिलाओं की अवहेलना करके आगे नहीं बढ़ पाएगा।

भाजपा के संगठन ने उसके बाद बड़ा कदम उठाते हुए संगठन में महिलाओं को जिम्मेवारी सौंपी। आडवाणी जी के समय में राष्ट्रीय कार्यसमिति में अध्यक्षीय आसन से इसपर एक प्रस्ताव पारित किया गया। राजनाथ सिंह जी के अध्यक्षीय कार्यकाल में, जब मैं भी उनकी टीम में मंत्री थी, सुषमा स्वराज जी के नेतृत्व में एक कमिटी बनाई गई और रिपोर्ट दी गई कि महिलाओं की जीत का औसत कितना होता है। हम सबने देखा है कि महिलाएं अपने लिए तय सीटों से अधिक सीटों पर जीत कर आती हैं। इसे हमने पंचायती राज संस्थाओं में भी देखा है। इसके बाद भाजपा पहली पार्टी बन गई जहां की हर इकाई में 33 प्रतिशत सीटें महिलाओं के लिए आरक्षित की जाने लगी, स्थानीय इकाई से लेकर राष्ट्रीय इकाई तक। कभी–कभी इतिहास के क्षण नियत होते हैं। ये आरोप भले लगाए जा रहे हैं कि चुनाव के ठीक पहले बिल को पारित कराना कोई सियासी हथकंडा है, लेकिन हमें ये भी देखना होगा कि इस समय बिल को लाना प्रधानमंत्री की दूरदर्शिता है। प्रधानमंत्री जी को यह लगा कि अभी स्थिति ऐसी बनी है कि कोई भी दल विधेयक का समर्थन करने से पीछे नहीं हट सकता। साथ ही ये एक सुखद संयोग है कि नए संसद भवन में प्रवेश करते ही सबसे पहला बिल जो पारित हो सका वह नारी शक्ति वंदन अधिनियम 2023 था। महिला सशक्तिकरण की दृष्टि से इस दिन को कभी भुलाया नहीं जा सकता, जब सरकार ने 27 वर्षों से लंबित इस बिल को महज 27 घंटों में पारित करा दिया। सरकार ने देश की महिलाओं को ये एक बहुत बड़ा उपहार दिया है।

एक और बात, इसमें अभी भी अड़ंगे लगाए जा रहे हैं। मुख्य बात ये है कि लंबवत आरक्षण में आरक्षण लागू नहीं किया जा सकता है। इसको समझना होगा। हम मानते हैं कि महिलाएं हमेशा एक जमात है, उनको जातियों में बांटना नहीं चाहिए। जहां तक सरकार की नीयत की बात है तो ये तय था कि इससे सरकार

सुखद परिवर्तन

को कोई लाभ नहीं मिलने वाला था। बस उसे सही समय का इंतजार था। कहते हैं कि महिलाओं के बिना कोई यज्ञ पूरा नहीं होता और नए सदन में महिला आरक्षण बिल पारित कर सरकार ने इस महायज्ञ को पूरा किया। भाजपा मानती है कि नए सदन में अधिक से अधिक संख्या में महिलाओं के आने से सदन और राजनी. ति में शालीनता आएगी। महिलाओं की भी अपनी ऊर्जा, प्रतिभा, क्षमता, मेधा और परिपक्वता कहीं किसी से भी कम नहीं है। उन्होंने खुद को सिद्ध किया है। वे स्वयंसिद्धा हैं।

जहां तक कानून के लागू होने की बात है तो यह एक संवैधानिक मुद्दा है और हर दल को इसे समझना होगा। बिना परिसीमन के सीटें तय नहीं की जा सकतीं। राजनीतिक दलों को ये मानना ही होगा कि जहां हमने 27 वर्षों तक संघर्ष किया है वहां कुछ साल और इंतजार किया जा सकता है। और जब कानून बनाने की बाध्यता हो गई तो इसका मतलब है कि महिलाओं को उनका हक तो अब देना ही होगा। केवल आलोचना के लिए आलोचना न करें राजनीतिक दल। हमारे संघर्ष को इससे मजबूती मिलेगी। मेरी पीढ़ी को इसका लाभ न मिले लेकिन मेरे बाद वाली पीढ़ी को तो इसका लाभ मिलेगा। कुछ पत्थर हमने तोड़े हैं, कुछ अगली पीढ़ियां तोड़ेंगी, महिलाओं के लिए रास्ते खुल रहे हैं। एक बड़ा अवरोध मार्ग से हट गया है।

इस पूरे मामले को लेकर विरोधी दलों में एक चुप्पी सी बनी हुई है क्योंकि उन दलों में इसके लिए खुलापन है ही नहीं। पक्षधरता और प्रतिबद्धता इन दोनों की कमी है उन दलों में। जो परकटी महिलाओं की बात करते थे, जिन्होंने बिल की प्रतिड़ां फाड़ीं, उनकी मानसिकता समझ में आती है। अब महिलाओं की चेतना बढ़ी, भाजपा के पास संख्या बल था, तो विरोधी दलों के पास कोई विकल्प नहीं बचा था। ऐसे में साथसवारों में अपना नाम लिखाने की आतुरता तो है विरोधी दलों में। इसलिए उनके पास बोलने को कुछ है ही नहीं। महिलाओं के वोट स्विंग हो रहे हैं, वे अपने निर्णय से वोट कर रही हैं। ऐसे में विरोधी दलों के लिए ये विवशता है कि वो इसको अनदेखा नहीं कर सकते। खुले मन से समर्थन नहीं कर रहे लेकिन विरोध के लिए उनके पास तर्क ही नहीं है। इसलिए चुप्पी है। महिलाओं का विरोध करने पर उनका अपना नुकसान है।

विपक्षी दलों में अच्छी चीजों का समर्थन करने की उदारता नहीं है। आज की राजनीति का संकट ये है कि लोग बहुत अनुदार हो गए हैं। अब राजनीतिक विरोधी नहीं होते, बल्कि शत्रु होते हैं। राजनीतिक व्यवहार, आचरण में हीनता आ गई है। महिलाएं आएंगी तो यह भी बदलेगा। मुझे मालूम है कि महिलाएं कर्मठता से काम करती हैं। जमीनी सच्चाई का उनको पता है। संवेदनशीलता भी उनमें अधिक होती है। किसी मुद्दे को राजनीतिक कारणों से उठाना और संवेदनशीलता के साथ उठाना, अलग–अलग बाते हैं। पुरुषों में इसकी कमी होती है।

बिहार में वर्तमान सरकार की नीयत और प्रतिबद्धता का पता तो सदन में उनकी बातों से ही लग गया। यहां भी महिलाओं को पंचायत में 50 प्रतिशत आरक्षण का फैसला सरकार ने तब लिया था जब भाजपा साथ में थी। मानसिकता बदलने में समय लगता है लेकिन जब कानून बन जाता है तो उसका लाभ उठाया जा सकता है। महिला नेतृत्व को अब खुले मन से स्वीकार करना ही पड़ेगा। 24 में नहीं आएंगी तो 29 में निश्चित रूप से आ जाएंगी। अब इस कानून को लंबित नहीं रखा जा सकता। अब एक उम्मीद है कि राजनीति में आने वाली महिलाओं को पता है कि यदि वे मेहनत करेंगी कि तो वे भी शीर्ष नेतृत्व तक पहुंच सकती हैं। महिलाएं महिलाओं के लिए और अधिक काम करेंगी। तेजी से समाज में परिवर्तन होगा। उनका आत्मविश्वास और भागीदारी बढ़ेगी। भले ही प्रतिशत सीमित हो, लेकिन लोगों को यह पता चल चुका है कि बेटियां भी गर्व का कारण बन सकती हैं। जब तक महिलाओं का योगदान समाज और राजनीति में नहीं होगा, तब तक न समाज स्वस्थ होगा और न देश। विकास केवल आर्थिक मोर्चे पर नहीं होता। महिलाओं के लिए और द्वार खुलेंगे तो भारत विश्वशक्ति बनने की ओर अग्रसर होगा।

महिलाएं एक जमात हैं, उनकी समस्याएं एक सी हैं और राजनीति में उनका प्रभाव भी एक जैसा होगा। चाहे हम कितनी भी आलोचना कर लें, ये तय है कि महिलाओं का अधिक से अधिक संख्या में राजनीति में आना शुभकर है। ये व्यवस्था परिवर्तन का, समाज में क्रांति लाने का एक धारदार उपकरण हैं। सामाजिक परिवर्तन अपनी गति से चलता है, लेकिन वह अलक्षित होता है, जब उसे राजनीतिक शक्ति मिलती है तो वह दुगनी गति से बढ़ने लगता है। जब महिलाएं सदन में पहुंचेंगी तो उन्हें सुना जाएगा। वो पूरी ताकत से बोलेंगी और उन पर ध्यान दिया जाएगा। हम मानते हैं कि सारी शक्तियां उनमें सन्निहित हैं। जब महिलाएं राजनीति में आने लगेंगी तो उनकी ताकत बढ़ेगी।

(बातचीत पर आधारित आलेख)

संदेह

'यह कानून कहीं चुनावी जलेबी तो नहीं'

असीमा भट्ट

एक सशक्त अभिनेत्री, कवयित्री एवं लेखिका। फिल्म 13 ट्रिब्यूट ऑफ लव 2020 में अपने अभिनय के लिए जानी जाती हैं। इन्होंने अपने पिता सुरेश भट्ट के जीवन पर एक किताब 'मन लागो यार फकीरी में' लिखी है।

हाल ही में लोकसभा और राज्यसभा दोनों ने महिला आरक्षण विधेयक 2023 (128वां संवैधानिक संशोधन विधेयक) अथवा नारी शक्ति वंदन अधिनियम पारित कर दिया। यह विधेयक लोकसभा, राज्य विधानसभाओं और दिल्ली विधानसभा में महिलाओं के लिये एक–तिहाई सीटें आरक्षित करता है। यह लोकसभा और राज्य विधानसभाओं में अनुसूचित जाति तथा अनुसूचित जनजाति के लिये सीटें आरक्षित रखेगा। पर यह सचमुच महिला आरक्षण विधेयक पारित करने का प्रस्ताव कहीं 'चुनावी जलेबी' तो नहीं।

चुनाव से पहले जैसे कई चुनावी जुमले–वादे होते हैं, कहीं यह भी वैसा ही तो नहीं, क्योंकि इसके कई कारण दिखाई दे रहे हैं:–

1. यह कानून पास होने के बाद भी लागू नहीं हुआ है। यह महिलाओं में उम्मीद जगाने के लिए 2024 के चुनाव के लिए एक शगूफा ही लग रहा है। जैसे पिछले चुनाव में जो वादे किए थे अगर याद हो तो देखें कि कितने पूरे हुए हैं।

2. नारी शक्ति वंदन बिल में ओबीसी (अन्य पिछड़ा वर्ग) और अल्पसंख्यक वर्ग की महिलाओं को शामिल नहीं किया गया है।

यहां डॉक्टर भीम राव अम्बेडकर साहब का एक कथन याद आता है कि ''जिस दिन कोई आदिवासी महिला भारत के सर्वोच्च पद राष्ट्रपति पद पर पंहुच जायेगी, देश में आरक्षण खत्म कर दिया जाना चाहिए।'' मुझे अम्बेडकर साहब की दूरदर्शिता पर गर्व है लेकिन राष्ट्रपति महोदया द्रौपदी मुर्मू जी से मेरा सवाल है कि वह इस पर क्या सोचती हैं। क्योंकि वह एक आदिवासी महिला हैं लेकिन आरक्षण बिल में अन्य पिछड़े वर्ग की महिलाओं की कोई चर्चा नहीं है, इस बात पर मुझे आश्चर्य है।

बात 1996 की है जब पहला महिला आरक्षण विधेयक संसद में पेश किया गया था (जो अब तक पारित नहीं हो पाया है। वैसे आगे भी इसकी संभावना कम ही दिखाई दे रही है)। उस दौरान मैं नवभारत टाइम्स पटना में पत्रकारिता कर रही थी और विभिन्न वर्ग की महिलाओं से इस विषय पर बात की थी। महिलाओं में आरक्षण को लेकर बहुत उत्साह और उम्मीदें जागीं थीं। सभी वर्गों की महिलाओं ने बहुत ही सकारात्मक प्रतिक्रिया दी थी। उनका मानना था जिस समाज में औरतों को कई दकियानूसी प्रथाओं के अंदर दबाकर रखा गया है, वहां उन्हें शिक्षा और नौकरी में आरक्षण मिलने से आत्मविश्वास बढ़ेगा और जो दबी–कुचली

संदेह

पिछड़ी महिलाएं हैं वो आगे आयेंगी। ऐसा तो नहीं हो पाया बल्कि यह विधेयक 'महिला वर्सेज पुरुष' के समान अधिकार की बात पर ही नहीं टिक गया बल्कि सवर्ण (उच्च) और पिछड़ी जाति महिलाओं के बीच भी बहस का विषय बन गया। "Women Verse Women" की लड़ाई छिड़ गई। जबकि यह पितृसत्तात्मक समाज का सबसे बड़ा षड्यंत्र रहा है कि औरतों को ही औरतों के खिलाफ खड़ा कर दो और बाद में कहो कि औरत ही औरत की दुश्मन होती हैं। जबकि मैं शुरू से कहती और लिखती आ रही हूं कि औरत की कोई जात (अगड़ी या पिछड़ी) नहीं होती। औरतों की एक ही जात है कि वह 'औरत' हैं। जैसे कि जब दलित औरतों पर एक बार कहीं लिखना था तो मैंने कहा था कि हर औरत दलित हैं। क्योंकि वह किसी न किसी के अधीन हैं और 'अधीन' इंसान की स्थिति दलित के समान ही होती है।

मेरे पिता कॉमरेड सुरेश भट्ट, जो कि लगातार महिलाओं के अधिकार और सुरक्षा के लिए औरतों के साथ हर मोर्च पर खड़े रहते थे और उनके साथ संघर्ष करते पाए जाते, उनसे जब एक बार मैंने महिलाओं की समाज में स्थिति पर पूछा था, तो उन्होंने कहा था, ''महिलाओं को आधी आबादी कहते भर हैं लेकिन आधी आबादी को आधा अधिकार आज तक समाज में नहीं मिला है।'' अगर आधी आबादी को हर जगह पुरुषों के बराबर आधा अधिकार मिले तभी सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक स्थिति मजबूत होगी और औरतों की स्थिति बदलेगी।

संसद में महिलाओं की पचास प्रतिशत भागीदारी होनी चाहिए। जितने पुरुष नेता हैं उतनी ही आधी हिस्सेदारी महिलाओं की भी होनी चाहिए। लेकिन कितनी पार्टियां हैं जो औरतों को चुनाव लड़ने के लिए टिकट देती हैं। मुश्किल से हरेक पार्टी में एक या दो, बहुत हुआ तो तीन। इससे अधिक तो नहीं देखा गया।

''बात आरक्षण की नहीं अधिकार की है।'' पच्चीस साल पहले मेरे पिता ने यह बात कही लेकिन आज तक महिलाएं हर जगह पिछड़ी हैं। राजनीति में, सदन में भी कितनी कम संख्या है, जबकि यह कहकर इस सवाल को टाल देते हैं कि स्त्रियां राजनीति में आना ही नहीं चाहतीं। वहीं दूसरी तरफ ग्राम स्तर पर मुखिया के चुनाव में महिलाओं को जब खड़ा किया गया तो वहां उनके पति का वर्चस्व रहा। अब ऐसे में औरतें तो कठपुतली बनकर रह गईं।

बहरहाल महिलाओं को खासकर गरीब और पिछड़ी तबके की औरतों को हर क्षेत्र में आगे आने के लिए आरक्षण एक कारगर कदम साबित हो सकता है अगर यह लागू हो तो...।

औरत

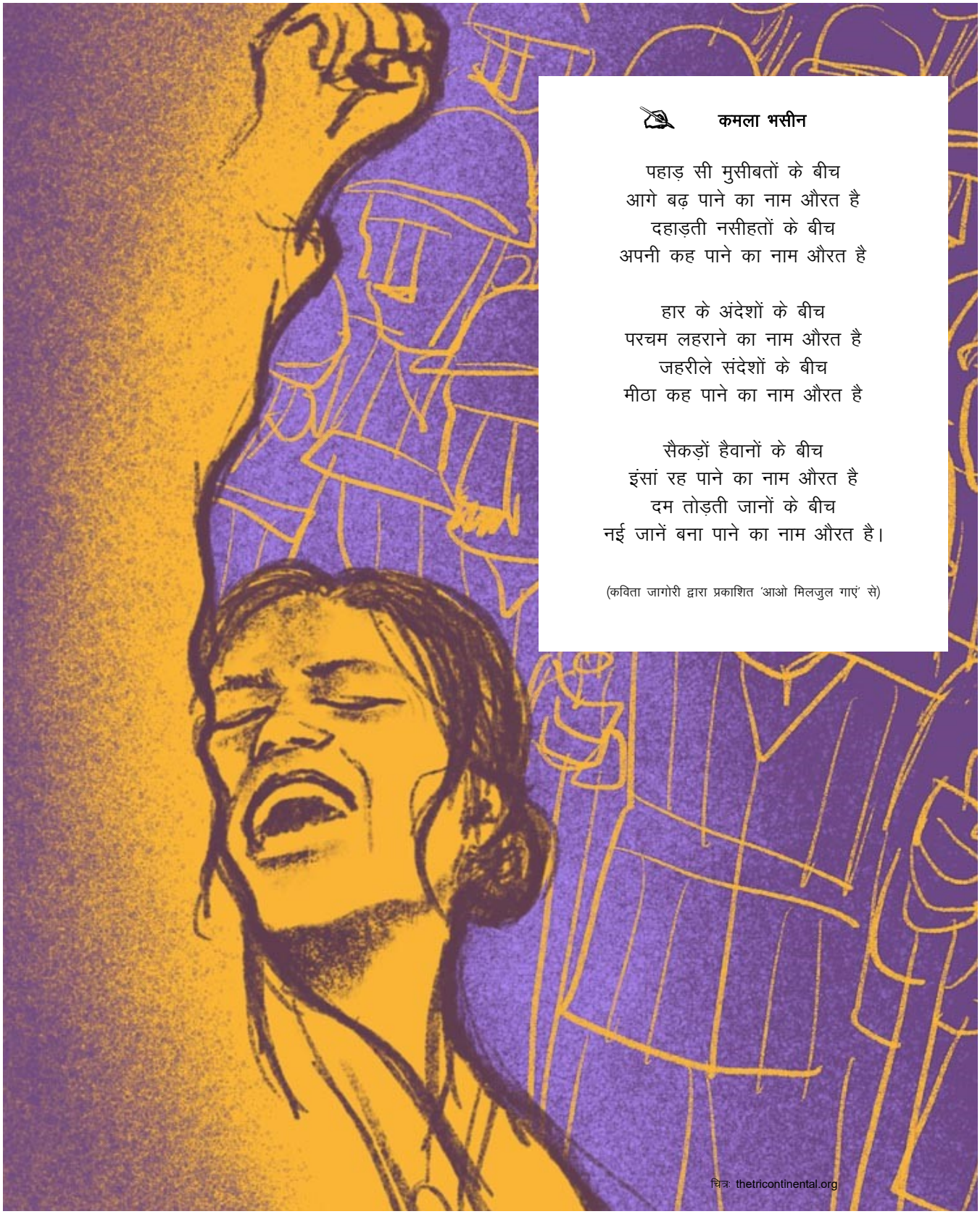

कमला भसीन

पहाड़ सी मुसीबतों के बीच
आगे बढ़ पाने का नाम औरत है
दहाड़ती नसीहतों के बीच
अपनी कह पाने का नाम औरत है

हार के अंदेशों के बीच
परचम लहराने का नाम औरत है
जहरीले संदेशों के बीच
मीठा कह पाने का नाम औरत है

सैकड़ों हैवानों के बीच
इंसां रह पाने का नाम औरत है
दम तोड़ती जानों के बीच
नई जानें बना पाने का नाम औरत है।

(कविता जागोरी द्वारा प्रकाशित 'आओ मिलजुल गाएं' से)

चित्र: thetricontinental.org

ऐप एक काम अनेक
पटना शहर को साफ स्वच्छ बनाने के लिए
'क्लीन पटना ऐप' डाऊनलोड करें
GET IT ON Google Play
Clean Patna App डाऊनलोड करे
CITIZEN GRIEVANCE APP
Welcome to Patna Smart City
Raise Complaint
Complaint Status
Track Vehicles
View Bills
Toll Free
Near Me
Responsible Person
Sos
अपनी शिकायत का स्टेटस जानें
शिकायत दर्ज करें
गाड़ी को ट्रैक करें
बिल देखें
हेल्पलाइन नंबर
155304
स्वच्छ पटना शहर अपना
कुछ हम करें, कुछ आप करें
पटना नगरपालिका
CITY OF PATNA
पटना नगर निगम द्वारा जनहित में जारी

अपने शहर को रखें साफ
पटना नगरपालिका
CITY OF PATNA
हेल्पलाइन नंबर 155304
पटना नगर निगम द्वारा जनहित में जारी
SWACHH SURVEKSHAN 2022
कुछ हम करें, कुछ आप करें
स्वच्छ पटना शहर अपना

मानो या ना मानो

तीन महिला संगठनों ने 1931 में ब्रिटिश प्रधानमंत्री को एक पत्र भेजकर महिलाओं के लिए राजनीतिक आरक्षण की मांग की।

महिला आरक्षण का मुद्दा संविधान सभा की बहस में भी उठा। हालांकि इसे इस आधार पर खारिज कर दिया गया कि लोकतंत्र से सभी समूहों को प्रतिनिधित्व देने की उम्मीद की जाती है।

भारत में महिलाओं की स्थिति समिति 1971 और महिलाओं के लिए राष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य योजना 1988 समितियों ने स्थानीय निकायों में महिलाओं के आरक्षण की सिफारिश की। इन सिफारिशों ने संविधान में 73वें और 74वें संशोधन का मार्ग प्रशस्त किया, जो सभी राज्य सरकारों को स्थानीय निकायों में महिलाओं के लिए एक तिहाई सीटें आरक्षित करने का आदेश देता है।

एक बेहतरीन समाज और नीति निर्माता हैं महिलाएं

नारी शक्ति वंदन विधेयक 2023 के कानून बनते ही देश में इसके फायदेमंद होने और न होने को लेकर चर्चा तेज हो गई है। इसमें कोई शक नहीं है कि महिलाएं न केवल एक बेतहरीन समाज का निर्माण कर सकती हैं बल्कि अपनी दूरदर्शिता और जिम्मेदारीपूर्ण रवैये के कारण बेहतरीन देश का निर्माण भी कर सकती हैं।

➪ महिलाओं के राजनीतिक प्रतिनिधित्व में वृद्धि– अंतर–संसदीय संघ (आईपीयू) की 'संसद में महिलाएं' रिपोर्ट (2021) के अनुसार, राष्ट्रीय विधायिकाओं में सेवारत महिलाओं की संख्या के मामले में भारत 140 अन्य देशों से नीचे है। भले ही स्वतंत्रता के बाद लोकसभा में महिलाओं का प्रतिनिधित्व बढ़ा है (17वीं लोकसभा में 16%), भारत अफ्रीका और दक्षिण एशिया के कई देशों (नेपाल, पाकिस्तान, श्रीलंका) से पीछे है।

➪ परिवर्तन लाने में महिला नेतृत्व की क्षमता– पंचायतों में महिलाओं के लिए आरक्षण के प्रभाव के बारे में 2003 के एक अध्ययन से पता चला है कि आरक्षण नीति के तहत चुनी गई महिलाएं महिलाओं की चिंताओं से जुड़ी सार्वजनिक वस्तुओं में अधिक निवेश करती हैं। हरियाणा में धाणी मयान खान जीपी की पूर्व महिला सरपंच ने महिलाओं के लिए एक प्रशिक्षण केंद्र बनाया और सुनिश्चित किया कि गांव का हर बच्चा स्कूल जाए। पश्चिम बंगाल और राजस्थान में पंचायतों पर एस्थर डुफ्लो और राघबेंद्र चट्टोपाध्याय के 2004 के एक पेपर में पाया गया कि महिला नेता सार्वजनिक वस्तुओं में अधिक निवेश करती हैं और पंचायत बैठकों में महिलाओं की बढ़ती भागीदारी सुनिश्चित करती हैं।

मानो या ना मानो

➪ राजनीति को अपराधमुक्त करने की दिशा में कदम– महिलाओं के लिए आरक्षित सीटें भारतीय राजनीति को अपराधमुक्त करने में मदद करेंगी। वर्तमान लोकसभा में 159 सांसदों ने अपने खिलाफ गंभीर आपराधिक मामले घोषित किए हैं, जिनमें बलात्कार, हत्या, हत्या का प्रयास, अपहरण, महिलाओं के खिलाफ अपराध शामिल हैं।

➪ महिलाओं के खिलाफ अपराध को संबोधित करना– महिला आरक्षण विधेयक समाज में महिलाओं के खिलाफ अपराध को संबोधित करने में मदद करता है। महिलाओं का प्रतिनिधित्व बढ़ने से बलात्कार के मामलों और घरेलू दुर्व्यवहार के मामलों में कमी आएगी।

➪ वोट शेयर के अनुरूप सीटों की संख्या में वृद्धि– हालांकि महिलाओं का वोट शेयर बढ़ा है, लेकिन राजनीति के पदों पर महिलाओं की संख्या उस अनुपात में नहीं बढ़ी है। भारत में महिलाएं पुरुषों के बराबर मतदान करती हैं लेकिन पुरुषों की तुलना में उनका प्रतिनिधित्व बहुत कम है। आरक्षित सीटें महिलाओं के वोट शेयर और संसद/विधानसभाओं में उनके प्रतिनिधित्व के बीच कुछ समानता लाएंगी।

➪ भारतीय राजनीति के पितृसत्तात्मक ढांचे को तोड़ना– भारतीय राजनीति पितृसत्तात्मक रही है और पार्टी के शीर्ष पदों पर पुरुषों का ही कब्जा रहा है। महिला आरक्षण विधेयक राजनीतिक दलों के शीर्ष पदों पर महिलाओं का प्रतिनिधित्व बढ़ाकर भारतीय राजनीति की इस पितृसत्तात्मक प्रकृति को खत्म कर देगा।

➪ रूढ़िवादिता को तोड़ना– महिला राजनेताओं में वृद्धि से 'महिलाओं को केवल गृहिणी के रूप में' की रूढ़िवादी छवि को बदलने में मदद मिलेगी और 'महिलाओं को कानून निर्माता के रूप में' धीरे–धीरे स्वीकार किया जाएगा। महिलाओं ने शिक्षा के क्षेत्र में प्रगति की है। वे सूचित, जिम्मेदार और मांग करने वाली मतदाता भी हैं।

➪ महिलाओं की बढ़ती आकांक्षाओं को पूरा करना होगा– विमानन, नौकरशाही, चिकित्सा, अंतरिक्ष, कला और साहित्य जैसे क्षेत्रों में महिलाओं ने उत्कृष्ट प्रदर्शन किया है।

➪ आर्थिक प्रदर्शन और बुनियादी ढांचे में सुधार– यूएन यूनिवर्सिटी के अनुसार, महिला विधायकों ने अपने निर्वाचन क्षेत्रों के आर्थिक प्रदर्शन में पुरुष विधायकों की तुलना में 1.8 प्रतिशत अधिक सुधार किया है। प्रधानमंत्री ग्राम सड़क योजना के मूल्यांकन से पता चलता है कि महिला नेतृत्व वाले निर्वाचन क्षेत्रों में अधूरी सड़क परियोजनाओं की हिस्सेदारी 22 प्रतिशत अंक कम है।

➪ अंतर्राष्ट्रीय अनुभव से सीखें– रवांडा में 61% महिला सांसद हैं जो रवांडा नरसंहार के घावों को भरने में सराहनीय कार्य कर रही हैं। महिला प्रतिनिधित्व का एक निश्चित प्रतिशत अनिवार्य करने से महिलाओं के समग्र प्रतिनिधित्व में वृद्धि होती है। रवांडा ने केवल 30% आरक्षण प्रदान किया है लेकिन उनकी महिला सांसद 2018 में 61% तक पहुंच गई हैं।

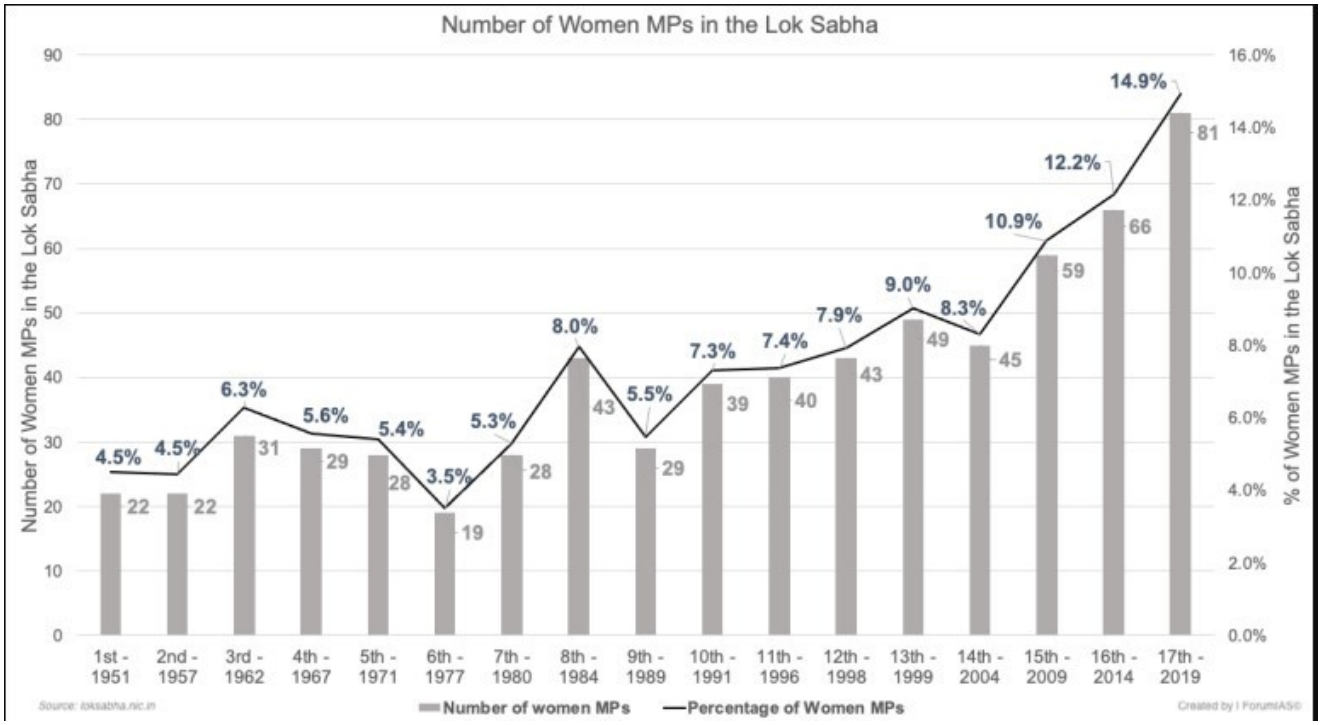

ग्राफिक्सः forumias.com

मानो या ना मानो

➪ लोकतंत्र को पुनर्जीवित करना– महिलाओं की उपस्थिति पूर्वाग्रहों से मुक्त होकर विभिन्न मुद्दों पर निष्पक्ष बातचीत और विचार–विमर्श सुनिश्चित करती है। महिलाएं अपने जीवन के अनुभवों में निहित अद्वितीय कौशल और राजनीतिक रणनीतियों को ला सकती हैं, जिससे वे भविष्य की पीढ़ियों के लिए आदर्श बन सकती हैं।

➪ राज्य पर नैतिक रूप से बाध्यकारी– राजनीतिक समानता का विचार संविधान का अभिन्न अंग है, जो राजनीति में महिलाओं को शामिल करने को नैतिक रूप से बाध्यकारी बनाता है।

फैसले लेने में महिलाओं के प्रतिनिधित्व को बढ़ावा देना और उन्हें सरकार चलाने और नीति निर्माण की प्रक्रिया में शामिल करना किसी भी देश और समाज के हित में सबसे अहम है। फिर भी यदि यह बिल लंबे अरसे तक पारित नहीं हो सका तो इसके पीछे राजनीतिक दलों की आपत्ति प्रमुख वजह रही। विधेयक के विरोध में कई तर्क दिए गए।

➪ कोई अलग ओबीसी आरक्षण नहीं– विधेयक सीटों के एक–तिहाई आरक्षण के मौजूदा कोटे के भीतर अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति की महिलाओं को अलग आरक्षण प्रदान करता है। हालांकि, ओबीसी महिलाएं, जो महिला आबादी का 60% हिस्सा हैं, को कोटा के भीतर अलग से आरक्षण प्रदान नहीं किया गया है।

➪ विधेयक का अधिनियमन– संसद में महिलाओं के लिए आरक्षण जनगणना और परिसीमन प्रक्रिया पर निर्भर करता है। हालांकि, जनगणना में देरी हुई है और परिसीमन राजनीतिक रूप से संवेदनशील हो सकता है , विशेष रूप से दक्षिणी भारत को प्रभावित करेगा, जहां विकास की प्रगति के कारण धीमी जनसंख्या वृद्धि देखी गई है।

➪ प्रॉक्सी के रूप में महिलाओं का उपयोग– पंचायतों में 'पंचायत पतियों' का विकास देखा गया है जो आरक्षित सीटों के लिए अपनी पत्नियों को प्रॉक्सी उम्मीदवार के रूप में उपयोग करते हैं। वे वास्तविक शक्ति का उपयोग करते हैं। ऐसी आशंका है कि संसद में महिलाओं के लिए आरक्षण के विस्तार के साथ हम 'सांसद और विधायक पतियों' का विकास देख सकते हैं।

➪ संविधान में निहित समानता के सिद्धांतों के विरुद्ध– महिला आरक्षण के विरोधियों का तर्क है कि यह विचार संविधान में निहित समानता के सिद्धांत के विपरीत है। यह विधेयक महिलाओं की असमान स्थिति को कायम रख सकता है क्योंकि उन्हें योग्यता के आधार पर प्रतिस्पर्धा करने वाला नहीं माना जाएगा।

➪ महिलाएं जाति समूहों की तरह एक सजातीय समूह नहीं हैं– महिलाएं एक जाति समूह की तरह एक सजातीय समुदाय नहीं हैं। परिणामस्वरूप, जाति–आधारित आरक्षण को उचित ठहराने के लिए जिन तर्कों का उपयोग किया जाता है, उनका उपयोग महिलाओं के लिए आरक्षण को उचित ठहराने के लिए नहीं किया जा सकता है। महिलाओं के हितों को अन्य सामाजिक, आर्थिक और राजनी. तिक स्तरों से अलग नहीं किया जा सकता ।

➪ मतदाताओं की पसंद पर प्रतिबंध– महिलाओं के लिए सीटों का आरक्षण मतदाताओं की पसंद पर प्रतिबंध लगा देगा। विधेयक के विरोधियों ने राजनीतिक दलों में महिलाओं के लिए आरक्षण और दोहरे सदस्य निर्वाचन क्षेत्रों (जहां निर्वाचन क्षेत्रों में दो सांसद होंगे और उनमें से एक महिला होगी) जैसे वैकल्पिक तरीकों का सुझाव दिया है।

➪ संसद में विधेयक पेश करने से पहले व्यापक परामर्श का अभाव– विधेयक को जल्दबाजी में आयोजित संसद सत्र में 'पूरक सूची' के माध्यम से पेश किया गया था। हालांकि महिला आरक्षण के लिए संवैधानिक संशोधन जैसी महत्वपूर्ण चीज को व्यापक चर्चा और विश्लेषण के बाद पेश किया जाना चाहिए था।

कह सकते हैं कि महिलाओं को संसद जैसे अति महत्वपूर्ण नीति निर्धारक मंच तक पहुंचने से रोकने के लिए विरोधियों के पास अपने तर्क हैं और ये तर्क लंबे समय से कायम हैं। लेकिन अब जबकि यह विधेयक कानून बन चुका है तो इसको लागू किया जाना भी तय है। ऐसे में सवाल उठता है कि क्या सचमुच संसद में 33 प्रतिशत आरक्षण मिल जाने से ही महिलाओं की स्थिति में सुधार हो जाएगा। यह तब तक मुश्किल है जब तक कि स्त्रियों और बालिकाओं के समग्र हित के लिए काम नहीं किया जाएगा।

साभारः forumias.com

राजनीतिक उपेक्षा

महिला वोटर चाहिए मगर लीडर नहीं

विभूति पटेल

(अर्थशास्त्र विभाग प्रमुख, एसएनडीटी वीमेंस यूनिवर्सिटी, मुंबई तथा डायरेक्टर, सेंटर फॉर स्टडी ऑफ सोशल एक्सक्लूजन एंड इनक्लूजन पॉलिसी)

महिला आरक्षण पर नारी शक्ति वंदन अधिनियम (NSVA) 2023 (128वां संवैधानिक संशोधन विधेयक) के संसद में पारित हो जाने के बाद भारतीय महिलाओं ने राष्ट्रीय स्तर पर मजबूत प्रतिनिधित्व और एजेंडा तय करने की शक्ति के साथ एक नए युग में प्रवेश किया है। 22 सितम्बर, 2023 को यह विधेयक कानून बन गया। एनएसवीए लोक सभा, दिल्ली विधानसभा तथा राज्य विधानसभाओं में महिलाओं के लिए 33 प्रतिशत सीटों को आरक्षित करता है। यह कानून अनुसूचित जाति तथा अनुसूचित जनजातियों के लिए लोकसभा तथा राज्य विधानसभाओं में आरक्षित सीटों पर भी लागू होगा। एससी तथा एसटी के लिए आरक्षित सीटों में से भी एक–तिहाई सीटों को महिलाओं के लिए आरक्षित रखना होगा और यह रोटेशन पद्धति पर होगा। एनएसवीए अनुच्छेद 332ए की बात करता है, जो प्रत्येक राज्य विधानसभा में महिलाओं के लिए सीटों के आरक्षण को अनिवार्य बनाता है।

वर्तमान में, लोकसभा में 82 महिलाएं (15.2%) और राज्यसभा में 31 महिला सांसद (13%) हैं। यद्यपि की पहली लोकसभा (5%) की तुलना में इनकी संख्या में उल्लेखनीय वृद्धि हुई है, फिर भी कई अन्य देशों के मुकाबले यह संख्या बहुत कम

है। चुनावों में धन बल, बाहु बल और महिलाओं के लिए जन्मजात द्वेष की भावना विद्यमान होने के कारण महिला उम्मीदवारों के लिए लोकसभा और विधानसभा के चुनावों में जीत हासिल कर पाना बहुत मुश्किल होता है। ऐसे में महिलाओं को आरक्षण देना ही एकमात्र रास्ता है जिससे सदन में उनकी संख्या बढ़ाई जा सकती है।

स्वीडन स्थित इंटरनेशनल इंस्टीच्यूट फॉर डेमोक्रसी एंड इलेक्टोरल एसिस्टेंस (IDEA) के मुताबिक, 40 वैसे देश जिन्होंने महिलाओं के लिए कोटा निर्धारित किया है, उनके अलावा, 50 से अधिक देशों की सबसे प्रमुख राजनीतिक पार्टियों ने स्वेच्छा से अपने यहां महिलाओं के लिए आरक्षण को तय किया है। हाल के यूएन वीमेन डाटा के अनुसार, अफ्रीका में रवांडा (61%), तथा लैटिन अमेरिका में क्यूबा (53%) और निकारागुआ (52%) तीन ऐसे देश हैं जहां की संसद में सबसे अधिक महिला प्रतिनिधि मौजूद हैं। राष्ट्रीय संसद में महिलाओं के प्रतिनिधित्व के मामले में बांग्लादेश (21%) और पाकिस्तान (20%) भी भारत से आगे हैं। निर्वाचन आयोग की रिपोर्ट के अनुसार, अक्टूबर, 2021 तक संसद के कुल सदस्यों के बीच महिलाओं का प्रतिनिधित्व 10.5 प्रतिशत था जबकि सभी राज्य विधानसभाओं में महिला विधायकों का प्रतिनिधित्व 9 प्रतिशत था।

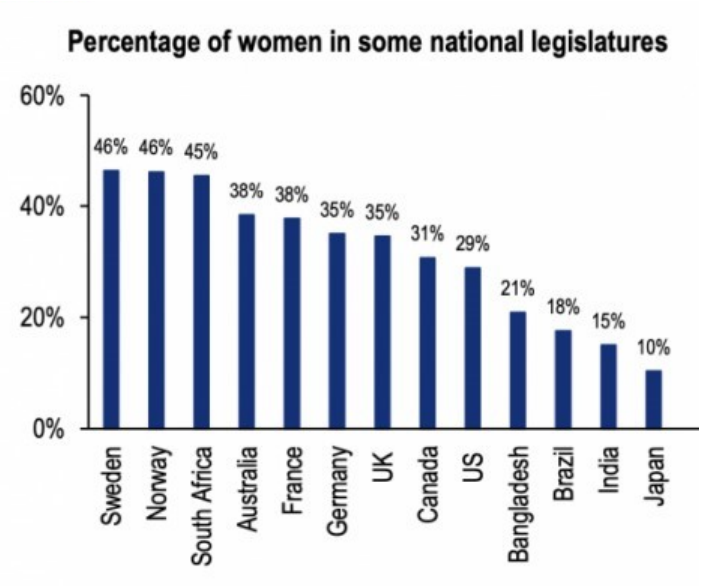

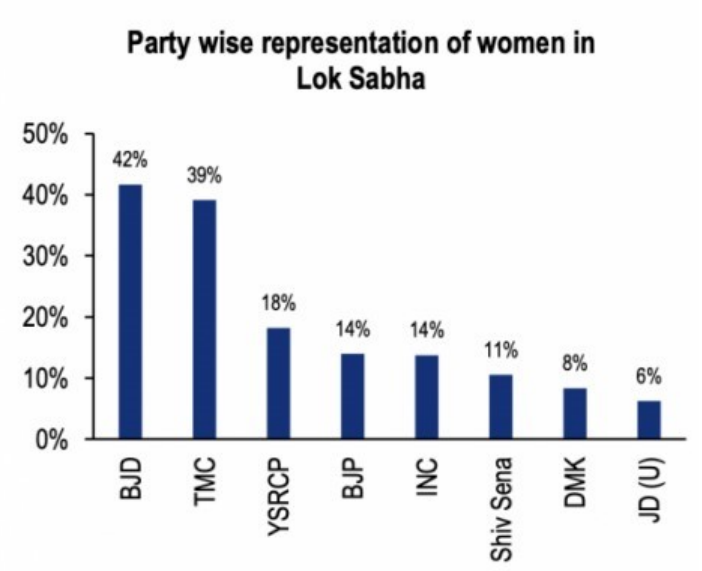

Note: Only parties with 10 or more members are shown.
Sources: Lok Sabha and Rajya Sabha Websites

1994 में 73वें और 74वें संवैधानिक संशोधन के बाद से, जब शहरी एवं ग्रामीण स्थानीय निकायों में महिलाओं के लिए 33 प्रतिशत आरक्षण की व्यवस्था की गई थी, और पिछले 30 सालों में 18 से अधिक राज्यों ने इसे बढ़ाकर 50 प्रतिशत तक कर दिया है, महिलाएं मतदाताओं और उम्मीदवारों, दोनों के लिए एक राजनीतिक निर्वाचन क्षेत्र बन चुकी हैं। मतदान करने की उम्र को घटाकर 18 वर्ष तक कर दिए जाने से वोटर सूची में बड़ी संख्या में पढ़ी–लिखी महिलाओं को शामिल होने का मौका मिला है। इसके अलावा मतदाताओं के लिए जागरूकता कार्यक्रम चलाए जाने तथा निर्वाचन आयोग के प्रयासों से युवा मतदाताओं में चुनाव और मतदान को लेकर उत्सुकता बढ़ी है और इसमें बड़ी संख्या लड़कियों व महिलाओं की है। हालांकि अफसोस इस बात का है कि राजनीतिक दलों ने महिला वोटरों की ताकत को तो पहचान लिया है लेकिन जब उम्मीदवारों के चयन की बारी आती है तो वो अपनी ही पार्टी में बरसों से काम कर रहीं समर्पित महिला कार्यकर्ताओं की अनदेखी कर देते हैं।

पिछले दो दशकों से सभी राष्ट्रीय राजनीतिक दल महिलाओं के एजेंडा को आगे बढ़ाने के लिए केवल जुबानी दावे कर रहे थे, तो उसके पीछे भी महिला संगठनों के राष्ट्रीय गठबंधन और 8 महिला संगठनों के संयुक्त प्रयासों का दवाब था। इनमें ऑल इंडिया वीमेंस कांफ्रेंस (AIWC), नेशनल फेडरेशन ऑफ वीमेन (NFIW), ऑल इंडिया डेमोक्रेटिक वीमेंस एसोसिएशन (AIDWA), महिला दक्षता समिति (MDS), ज्वायंट वीमेंस प्रोग्राम (JWP), फोरम फॉर चाइल्ड केयर सर्विसेज (FORCES), सेंटर फॉर वीमेंस डेवलपमेंट स्टडीज (CWDS) इत्यादि संगठन शामिल थे। असल में सभी राजनी. तिक दलों ने आरक्षण की मांग को लेकर महिलाओं के साथ केवल छल ही किया है, तभी तो 1996 से लेकर 2011 के बीच इस बिल को पास कराने के 14 प्रयास विफल हो गए।

निचले सदन में महिलाओं के लिए आरक्षणः एनएसवीए ने संविधान में अनुच्छेद 330ए को शामिल करने का प्रावधान

किया, जो अनुच्छेद 330 के प्रावधानों से लिया गया है, और जो लोकसभा में एससी/एसटी के लिए सीटों के आरक्षण का प्रावधान करता है। एनएसवीए ने प्रावधान किया कि महिलाओं के लिए आरक्षित सीटें राज्यों या केंद्र शासित प्रदेशों में विभिन्न निर्वाचन क्षेत्रों में रोटेशन द्वारा आवंटित की जा सकती हैं। अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति के लिए आरक्षित सीटों में, विधेयक में रोटेशन के आधार पर महिलाओं के लिए एक–तिहाई सीटें आरक्षित करने की मांग की गई है।

राज्य विधानसभाओं में महिलाओं के लिए आरक्षणः एनएसवीए अनुच्छेद 332ए पेश करता है, जो प्रत्येक राज्य विधानसभा में महिलाओं के लिए सीटों के आरक्षण को अनिवार्य करता है। इसके अतिरिक्त, एससी और एसटी के लिए आरक्षित सीटों में से एक–तिहाई महिलाओं के लिए आवंटित की जानी चाहिए, और विधानसभाओं के लिए सीधे चुनाव के माध्यम से भरी गई कुल सीटों में से एक–तिहाई भी महिलाओं के लिए आरक्षित होनी चाहिए।

दिल्ली के एनसीटी में महिलाओं के लिए आरक्षण (239एए में नया खंड): संविधान का अनुच्छेद 239एए केंद्र शासित प्रदेश दिल्ली को उसके प्रशासनिक और विधायी कामकाज के संबंध में राष्ट्रीय राजधानी के रूप में विशेष दर्जा देता है।

अनुच्छेद 239एए(2)(बी) को एनएसवीए द्वारा संशोधित किया गया था ताकि यह जोड़ा जा सके कि संसद द्वारा बनाए गए कानून दिल्ली के राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र पर लागू होंगे।

आरक्षण को लागू करना (नया अनुच्छेद–334ए): इस विधेयक के लागू होने के बाद होने वाली जनगणना के बाद आरक्षण प्रभावी होगा। जनगणना के आधार पर महिलाओं के लिए सीटों को आरक्षित करने के लिए परिसीमन किया जाएगा। आरक्षण 15 वर्ष की अवधि के लिए प्रदान किया जाएगा। हालांकि, यह संसद द्वारा बनाए गए कानून द्वारा निर्धारित तिथि तक जारी रहेगा।

सीटों का रोटेशनः महिलाओं के लिए आरक्षित सीटों को प्रत्येक परिसीमन के बाद रोटेट किया जाएगा, जैसा कि संसद द्वारा बनाए गए कानून द्वारा निर्धारित किया गया है।

क्यों नाखुश हैं महिला आंदोलनकारीः

महिला अधिकार आंदोलनकारी इस तथ्य से नाराज हैं कि एनएसवीए जनगणना के बाद होने वाले परिसीमन के बाद प्रभाव में आएगा। यह चुनाव के चक्र को निर्दिष्ट नहीं करता है जिससे महिलाओं को उनका

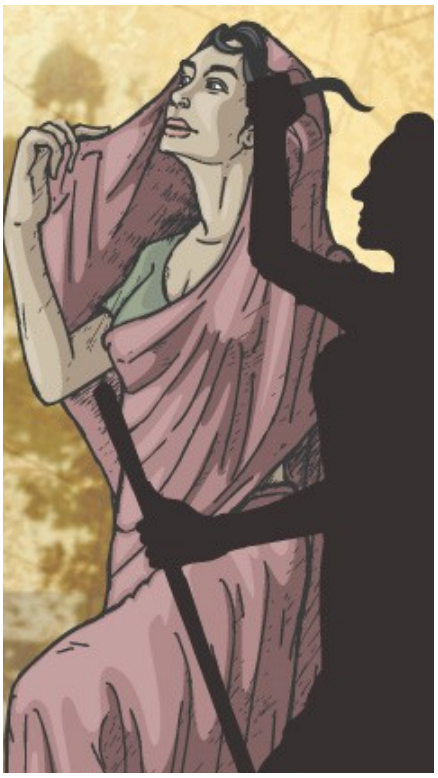

उचित हिस्सा मिलेगा। दूसरा, विवाद एनएसवीए के उस बिंदु को लेकर है, जिसमें राज्यसभा और राज्य विधान परिषदों में महिलाओं को आरक्षण प्रदान नहीं किया गया है। राज्यसभा में वर्तमान में लोकसभा की तुलना में महिलाओं का प्रतिनिधित्व कम है। महिला संगठनों का मानना है कि प्रति. निधित्व एक आदर्श है जिसे निचले और ऊपरी दोनों सदनों में प्रतिबिंबित किया जाना चाहिए। उन्होंने बताया कि एनएसवीए ने भारत के संविधान के अनुच्छेद 334 के प्रावधानों को भी लिया है, जो संसद को कानूनों के अस्तित्व में आने के 70 वर्षों के बाद आरक्षण के प्रावधानों की समीक्षा करने के लिए बाध्य करता है, लेकिन महिला आरक्षण के मामले में, एनएसवीए ने महिलाओं के लिए आरक्षण प्रावधानों की संसद द्वारा समीक्षा करने के लिए 15 साल के सनसेट क्लॉज का प्रावधान किया है।

निष्कर्षः महिला राजनीतिक कार्यकर्ता चाहे जिस भी पार्टी की हों, उनके पास उनकी खुद की सोच होती है, लेकिन चुनाव के समय सीटों का बंटवारा करते वक्त आलाकमान अपनी ही पार्टी की सीनियर महिला नेताओं को भी बढ़ावा नहीं देते। ज्यादातर पार्टी अपनी महिला कार्यकर्ताओं को सबसे निचले स्तर पर रखती हैं। हर दल में पैसे और ताकत का बोलबाला है। संसद और राज्य विधानसभाओं तथा परिषदों में महिलाओं को आरक्षण ही एकमात्र वह रास्ता है जिससे ऐतिहासिक अन्याय झेल रही महिलाओं को चुनावी राजनीति में एक समान स्तर पर काम करने का मौका मिलेगा। इन सभी कारकों को ध्यान में रखते हुए, महिला अधिकार आंदोलन इस निष्कर्ष पर पहुंचता है कि हालांकि कार्यान्वयन की समय–सीमा को लेकर एनएसवीए एक शर्त से बंधा है, फिर भी यह मानना होगा कि यह एक महत्वपूर्ण कदम है। अब, जैसा कि हम आगे देखते हैं, राजनीतिक दलों के पास कोई बहाना नहीं है। 2024 के चुनाव निर्णायक कार्रवाई करने और आवश्यकतानुसार इच्छुक महिला उम्मीदवारों को चुनाव लड़ने के लिए सीटें आवंटित करने का सुनहरा अवसर प्रदान करते हैं। तो आइए, एक नई उम्मीद और समर्पण के साथ हम अपनी इस यात्रा को जारी रखें, इस बात को ध्यान में रखते हुए कि हमारे सामूहिक प्रयास हमें एक अधिक समावेशी और समानतापूर्ण राजनीतिक परिदृश्य तथा अधिक प्रतिनिधिक लोकतंत्र के समीप लेकर आए हैं।

बिहार सरकार

कला, संस्कृति एवं
युवा विभाग, बिहार

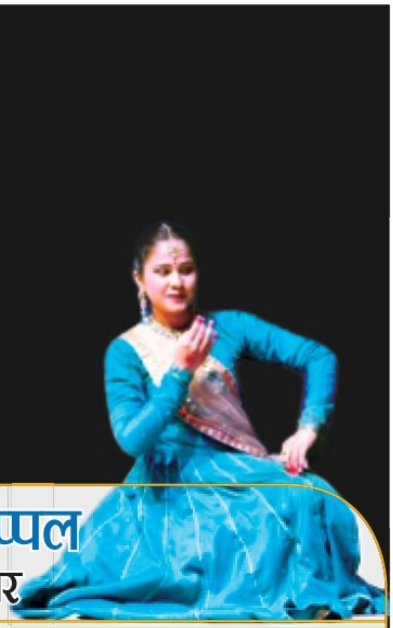

पद्मश्री पंडित हरि उप्पल
की जयंती के अवसर पर
शास्त्रीय नृत्य महोत्सव
(22-23 सितंबर 2023)

पद्मश्री पंडित हरि उप्पल की जयंती के अवसर पर शास्त्रीय नृत्य महोत्सव का उद्घाटन करते कला-संस्कृति एवं युवा विभाग मंत्री श्री जितेन्द्र कुमार राय, विभागीय अपर मुख्य सचिव श्रीमती हरजोत कौर बम्हरा, अपर सचिव श्री दीपक आनंद एवं पशु एवं मत्स्य विभाग के प्रधान सचिव डॉ एन विजया लक्ष्मी।

कला, संस्कृति एवं युवा विभाग की विभागीय अपर मुख्य सचिव, श्रीमती हरजोत कौर बम्हरा के साथ पद्मश्री गीता चंद्रन के भरतनाट्यम और इंस्टीट्यूट ऑफ मणिपुरी परफॉर्मिंग आर्ट्स की टीम।

डॉ एन विजया लक्ष्मी, (आईएएस) द्वारा गणेश वंदना के साथ कार्यक्रम की शुरूआत।

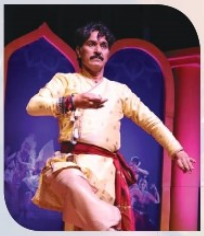

शास्त्रीय नृत्य महोत्सव में श्री राजेंद्र गंगानी अपनी प्रस्तुति देते हुए।

प्रस्तुति देते कलाकार।

कथक प्रस्तुति में आदि शक्ति माँ दुर्गा के अलग - अलग रूपों को दर्शाते हुए कलाकार।

सूरत बदलनी होगी

कानून नहीं, उनका क्रियान्वयन होना चाहिए

डॉ शरद कुमारी

प्रोग्राम मैनेजर, एक्शन एड

भारतीय संसद में महिला आरक्षण के लिए विभिन्न महिला संगठनों द्वारा किये गये आंदोलनों एवं कई राजनीतिक दलों के निरंतर प्रयासों के बाद इस वर्ष संसद में महिलाओं को आरक्षण का कानून पास हो सका है। भारतीय महिला फेडरेशन की वरिष्ठ नेता एवं इतिहासकार गार्गी चक्रवर्ती बताती हैं कि स्वतंत्रता आंदोलन में शुरू से ही महिलाओं ने बढ़–चढ़ कर हिस्सा लिया था। वर्ष 1942 की क्रांति की नायिका अरूणा आसफ अली किशोरावस्था में ही इस आंदोलन में कूद पड़ी थीं लेकिन आजादी मिलने के बाद धीरे–धीरे उन्हें भी यह अहसास होने लगा कि देश तो आजाद हो गया लेकिन महिलाएं हाशिये पर ही खड़ी रह गईं। इसी सोच के साथ वर्ष 1954 में अरूणा आसफ अली ने भारतीय महिला फेडरेशन (NFIW) की स्थापना की। इसके बाद महिला अधिकारों के लिए आंदोलन में और तेजी आई। गार्गी बताती हैं कि हम सब सोचते थे कि विकास के अन्य मोर्चों को जीत लेने के बाद महिलाएं खुद इतनी सबल हो जाएंगी कि उन्हें राजनीतिक भागीदारी निभाने का मौका स्वतः ही दिया जाने लगेगा।

1975 में जब 'टुवर्ड्स इक्वलिटी' नामक दस्तावेज आया जिसमें महिलाओं की स्थिति का सूचक लिंगानुपात को माना गया था, तो उस वक्त तक महिला संगठनों में यह असमंजस की स्थिति थी कि आरक्षण के लिए संघर्ष किया जाय अथवा यह प्राकृतिक रूप से हमें उपलब्ध हो

सूरत बदलनी होगी

जाएगा। परंतु साल दर साल बीतते गये, किसी भी राजनीतिक दल ने महिलाओं की भागीदारी सही मायने में तय नहीं की। तब इसके बाद महिला संगठनों ने महिला आरक्षण के लिए आंदोलन शुरू किया। कई राजनीतिक उतार–चढ़ावों के क्रम में महिला आरक्षण की जबर्दस्त मांग और अपनी रणनीति के तहत तत्कालीन प्रधानमंत्री राजीव गांधी के प्रयासों से वर्ष 1992 में 73वां और 74वां संविधान संशोधन के रूप में त्रिस्तरीय पंचायती राज संस्थाओं में महिलाओं को 33 प्रतिशत आरक्षण मिला। इस प्रकार पहली बार आरक्षण का अधिकार अस्तित्व में आया और भारतीय राजनीति में स्पष्ट रूप से महिलाओं का प्रवेश हुआ। इसके बाद संसद एवं विधानसभाओं में महिला आरक्षण की मांग के लिए आंदोलनों में तेजी आई। 1996 में संयुक्त मोर्चा की सरकार ने एक बार फिर महिला आरक्षण विधेयक को सदन के सामने रखा लेकिन राष्ट्रीय राजनीति में दखल रखने वाले दलों ने इसे पारित नहीं होने दिया। उन्हें डर था कि आरक्षण लागू होते ही पुरुष वर्चस्व वाली लोकसभा में 181 महिलाओं को स्थान मिल जाएगा। वे यह नहीं सोच पाये कि बिना महिलाओं की उन्नति के यह राष्ट्र विकसित देशों की कतार में नहीं आ पाएगा।

मानव विकास रिपोर्ट, 2013 के अनुसार लिंगभेद करने वाले 148 देशों की सूची में भारत 132वें स्थान पर है। यहां 50.4 प्रतिशत पुरुषों की तुलना में महज 26.6 प्रतिशत महिलाएं ही माध्यमिक तथा उच्च शिक्षा प्राप्त कर पाती हैं। वहीं श्रमिक बाजार में पुरुषों के 80.7 प्रतिशत के मुकाबले महिलाएं केवल 29 प्रतिशत ही मौजूद हैं। जमीन जायदाद के मालिकाना हक के मामलों में महिलाओं का हिस्सा सिर्फ 4 प्रतिशत है जबकि कुल खाद्यान्न का 73 प्रतिशत उपज महिलाओं द्वारा किया जाता है (एनएसएस 66वां, 2009–10)। प्रति एक लाख गर्भवती महिलाओं में से दो सौ की मौत हो जाती है। राष्ट्रीय अपराध रिकार्ड ब्यूरो के मुताबिक वर्ष 2010 की तुलना में अपराध में 7.11 प्रतिशत की वृद्धि हुई है। ये आंकड़े देश में महिलाओं की स्थिति को बयां करते हैं। ऐसा नहीं है कि देश ने अब तक महिलाओं के हित से जुड़े मुद्दों पर निर्णय नहीं लिये हैं बल्कि भारत कई उन अंतरराष्ट्रीय संधियों का हिस्सा है जो महिलाओं की प्रगति के मार्ग को प्रशस्त करते हैं। भारत ने मानवाधिकार संबंधी समझौतों पर हस्ताक्षर किये हैं जिनमें आईसीईएससीआर, सीईआरडी, सीईडीएडब्ल्यू तथा समानता एवं भेदभाव रहित अंतरराष्ट्रीय कानूनों का स्पष्ट तथा मजबूती से पालन किया जाना सुनिश्चित किया गया है। देश में इन सबसे जुड़े कई कानून भी बनाये गये हैं लेकिन बात तब बनती है जब कानूनों का पालन सही ढंग से किया जाता है। हर तंत्र, हर विभाग और हर कानूनों पर पुरुषवादी रंग चढ़ा होने के कारण न तो सख्त कानून अपना प्रभाव दिखा पाते हैं और न ही लोकलुभावन योजनाएं रंग लाती हैं। महिलाओं के विरुद्ध होने वाले भेदभाव के खिलाफ आवाज उठाने के बाद ही सूरत बदल सकती है। ये तभी संभव है जब नीति निर्धारण, कार्यपालिका और न्यायपालिका में महिलाओं को बराबर की हिस्सेदारी मिले।

महिलाओं के आरक्षण एवं अन्य मांगों को लेकर बिहार महिला समाज की महिलाओं ने लंबा संघर्ष किया है (चित्रः बिहार महिला समाज)

बिहार सरकार

महिला एवं बाल विकास निगम, बिहार
समाज कल्याण विभाग

Centre for Catalyzing Change

कार्यस्थल पर आंतरिक समिति एवं जिला स्तर पर स्थानीय समिति है जरूरी

प्रत्येक कार्यस्थल पर एक समिति गठित करना आवश्यक है ।

अगर संगठन में कोई महिला नहीं है तो ?

वहाँ समिति का गठन हेतु अन्य कार्यालयों अथवा कार्यस्थल की प्रशासनिक इकाईयों से पीठासीन अधिकारी मनोनीत किया जायेगा। यदि कार्यस्थल के अन्य कार्यालयों या प्रशासनिक इकाइयों में वरिष्ठ स्तर की महिला कर्मचारी नहीं है, तो पीठासीन अधिकारी को उसी नियोक्ता के अन्य विभाग या संस्था या किसी अन्य कार्यस्थल से नामित किया जाएगा।

आंतरिक समिति (आईसी)

प्रत्येक संगठन/विभाग को कम से कम पांच सदस्यों वाली एक आंतरिक समिति (आईसी) का गठन करना अनिवार्य है| इस समिति की अध्यक्ष संगठन/विभाग में वरिष्ठ स्तर पर कार्यरत महिला होगी। इस समिति के आधे सदस्य महिलायें होगीं और एक बाहरी सदस्य होंगे किसी एनजीओ से विशेषकर जो महिलाओं के मुद्दों/ या उनकी बेहतरी के लिए कार्य करते हो या जिनके पास सामाजिक कार्य का अनुभव हो या कानूनी ज्ञान हो ।

स्थानीय समिति (एलसी)

राज्य सरकार हर जिले में जिलाधिकारी/ अतिरिक्त जिला मजिस्ट्रेट/कलेक्टर/ डिप्टी कलेक्टर को जिला अधिकारी के रुप में अधिसूचित करेगी, जो एक स्थानीय समिति (एलसी) का गठन करेंगे ताकि असंगठित क्षेत्र या छोटे प्रतिष्ठानों में महिलाओं को एक यौन उत्पीड़न से मुक्त वातावरण में काम करने का अवसर मिल सके।

किसी विशेष जिले में एलसी का पता लगाने के लिए

- जिला पदाधिकारी कार्यालय से सम्पर्क करें
- अपने जिले/राज्य में कार्यरत वन स्टॉप सेंटर/महिला हेल्पलाइन (181, 100 आदि के माध्यम से टोल फ्री) से संपर्क करें
- राज्य महिला आयोग से संपर्क करें
- राज्य के महिला एवं बाल विकास विभाग/महिलाओं के मुद्दों की देखभाल करने वाले विभाग से संपर्क करें

संगठन/जिले में आईसी/ एलसी का गठन न करने पर रु. 50,000/- जुर्माने का दंड है

बार-बार समिति का गठन नहीं करके नियम का उल्लंघन करने वालों को व्यावसायिक गतिविधियों को करने के लिए आवश्यक लाइसेंस/पंजीकरण को रद्द करके /वापस लेकर दंडित किया जाएगा।

बराबरी और सम्मान,

हो हर कार्यस्थल की पहचान

www.emanjari.com

मंजरी

स्त्री के मन की

बिहार
असीम अवसरों का प्रदेश

भूमि आवंटन की प्रक्रिया

बिहार औद्योगिक क्षेत्र विकास प्राधिकरण (BIADA) उद्यमियों को लीज के आधार पर औद्योगिक इकाई स्थापित करने के लिए भूमि प्रदान करता है।

यदि सभी आवश्यक कागजात ठीक हैं तो भूमि आवंटन प्रक्रिया अत्यंत सरल है। प्रोजेक्ट क्लीयरेंस कमेटी (पीसीसी) की साप्ताहिक बैठक होने के कारण आवेदक के आवेदन पर निर्णय त्वरित आधार पर की जाती है।

- आवेदक को BIADA की वेबसाइट पर भूमि/शेड के लिए आवेदन करना होगा। आवेदक द्वारा वेबसाइट पर पूर्ण विवरण और दस्तावेज अपलोड करना होगा।
- आवेदक द्वारा प्रस्तावित परियोजना के संबंध में BIADA द्वारा यदि कोई प्रश्न उठाए गए हैं तो उत्तर देना होगा और दस्तावेज़ प्रस्तुत करना होगा।
- प्रोजेक्ट क्लीयरेंस कमेटी (पीसीसी) की बैठक में आवेदक के आवेदन पर चर्चा तथा अंतिम अनुशंसा
- पीसीसी की संस्तुति के बाद बियाडा भूमि आवंटन पत्र जारी करेगा जो कि आवेदक को ई-मेल किया जाएगा
- आवेदक को आवंटन पत्र में वर्णित विवरण के अनुसार ऑनलाइन भुगतान करना होगा
- आवेदक द्वारा भुगतान के उपरान्त संबंधित क्लस्टर डीजीएम के समन्वय से भूमि का वास्तविक कब्जा लेना होगा
- आवेदक द्वारा अपने औद्योगिक इकाई की आवश्यक स्वीकृति और अनुमोदन के लिए सिंगल विंडो सिस्टम पोर्टल पर आवेदन

https://swcz.bihar.gov.in

आप हमें ई–मेल करें

आप हमें अपने लेख और पत्र ई–मेल भी कर सकते हैं। इस विषय में विशेष जानकारी equityasia@gmail.com पर ली जा सकती है। प्रकाशक की अनुमति के बिना पत्रिका में प्रकाशित किसी भी सामग्री का अन्यत्र इस्तेमाल करना कॉपीराइट का उल्लंघन माना जाएगा।

RNI Title Code: BIHBIL02442

© इक्विटी फाउंडेशन